चन्दामामा
सितम्बर १९७७
Rs
1.25

ज्यादा कोको शक्ति

और ज़्यादा कोको स्वाद

नया

बोर्नविटा ज़्यादा कोको के साथ

अब बोर्नविटा में और भी ज़्यादा कोको... ताकि अब बोर्नविटा पहले से भी ज़्यादा शक्तिदायक, ज़्यादा स्वादिष्ट लगे.

बोर्नविटा में मिली कोको, खून बनानेवाले लौहतत्व से भरपूर तो है ही; इसमें विटामिन बी और डी के साथ साथ कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम और पोटैशियम जैसे खनिज लवणों के गुण भी हैं. एक कप गर्म दूध में दो चम्मच बोर्नविटा मिलाइए. शक्तिदायक, स्वादिष्ट पेय तैयार.

बोर्नविटा, बच्चों को हर रोज़ दो बार दीजिए. बच्चों के बढ़ते शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति करने में बोर्नविटा सहायक होता है... और बच्चों का साथ निभाने में आपके लिए भी उतना ही ज़रूरी !

७५ पैसे बचाइए

बोर्नविटा ४५० ग्राम के रीफ़िल पैक में भी मिलता है जिसमें ७५ पैसों की बचत होती है. रीफ़िल पैक को खोलते ही अपने बोर्नविटा के टिन में उलट दीजिए जिससे उसकी ताज़गी बनी रहे.

OBM 6714-HIN

चन्दामामा

सितंबर १९७७

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI. CHANDAMAMA is published monthly and distributed in U.S.A. by Chandamama Distributors, West Chester PA 19380. Subscription 1 year $ 6-50. Second Class Postage paid at West Chester, PA.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा 'दो रूप' जिज्ञासावर्द्धक है।

साधरणतया पद तथा ओहदे रखनेवाले जनता की मान्यता का लोभ नहीं रखते। जनता का अत्यधिक हित चाहनेवाला शासक भी सभी लोगों की प्रशंसा प्राप्त नहीं कर सकता। इसका कारण यह है कि शासक जहाँ समस्त प्रजा के हित की बात सोचते हैं, वहाँ व्यक्ति साधारणतया अपने वैयक्तिक हित की बात सोचता है। लोकप्रिय शासन के बावजूद भी असंतुष्ट लोग पाये जाते हैं। यह बात हमें 'मान्यता' नामक कहानी के द्वारा विदित होती है।

वर्ष : ३० सितंबर १९७७ अंक : १

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

न गृहाणि, न वस्त्राणि,
न प्राकारा स्तिरस्क्रिया
नेदृशा राजसत्कारा
वृत्त मावरणम् स्त्रियाः ॥ १ ॥

[नारियों के लिए घर, वस्त्र, राजमहल, पर्दे जैसी राजमर्यादाएँ आवृत्त नहीं हो सकतीं ।]

व्यसनेषु, न कृच्छ्रेषु,
न युद्धेषु, स्वयंवरे
न क्रतौ, न विवाहेच,
दर्शनम् दुष्यति स्त्रियाँ ॥ २ ॥

[विपदाओं, दुखों, युद्धों, स्वयंवरों, यज्ञों तथा विवाह के समय नारियाँ परपुरुषों को दिखाई दे सकती हैं ।]

सैषा युद्धगता चैव,
कृच्छ्रेच महतिस्थिता,
दर्शनेस्या न दोष स्स्यात्
मत्समीपे विशेषतः ॥ ३ ॥

[यह (सीताजी) युद्ध क्षेत्र में हैं, अत्यंत विपदा में हैं, साथ ही मैं (राम) यहीं पर हूँ, इस कारण सीताजी अन्यों को दिखाई दे सकती हैं !]—(रामायण)

नारी का पर्दा

काकोलूकीयम

[५०]

तीतर तथा खरगोश के बीच बड़ी देर तक वाद-विवाद चलता रहा। आखिर तीतर खीझ कर बोला–"धर्म, न्याय इत्यादि पर आप का इतना गहरा विश्वास हो तो हम ज्ञानियों के पास जाकर अपने झगड़े का फ़ैसला कर लेंगे। वे जैसा भी निर्णय दे तो मैं मान लूंगा; आप भी इस से सहमत होंगे न?"

"समस्त को जाननेवाले लोगों के फ़ैसले को न माननेवाला व्यक्ति महा पापी होता है। मैं भी उनके फ़ैसले को स्वीकार करूँगा।" खरगोश ने कहा।

इस के बाद तीतर और खरगोश अपने झगड़े का फ़ैसला कर सकनेवाले व्यक्ति की खोज में चल पड़े। मैं भी इस कुतूहल के साथ उनके पीछे चल पड़ा कि देखें, क्या होता है। रास्ते में खरगोश शीघ्रघ ने तीतर से पूछा–"दोस्त, हम जिसके पास न्याय के लिए जाते हैं, उस का नाम आप ने नहीं बताया?"

तीतर बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला–"क्या आप नहीं जानते? नदी के किनारे थोड़ा आगे रेतीले टीले तथा झाड़ियाँ हैं, उनके निकट रुधिकर्ण नामक एक मार्जाल मुनि रहते हैं। उन्होंने एक जमाने में अपनी जाति के जंगली बिलावों की भांति घोर पाप कृत्य करते अपना जीवन बिताया। इस के बाद उनका मन बदल गया, नदी के तट पर निवास करते भगवान की आराधना में अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। वे धर्म शास्त्र के बड़े ही ज्ञाता हैं।"

शीघ्र ही वे दोनों नियत स्थान पर पहुँचे। जंगली बिलाव को मोटे-तगड़े देख खरगोश मन ही मन घबरा गया। उसके दाढ़ ही

पैने थे और उसकी दृष्टि तेज थी । खरगोश ने तीतर से कहा–"इस दुष्ट की सलाह लेने का क्या मतलब है? कहा जाता है कि कपट सन्यासियों पर विश्वास नहीं करना चाहिए । ऐसे कपट साधू तो हर पुण्य नदी के तट पर होते ही हैं ।"

ये बातें सुन रुधिकर्ण ने निश्चय कर लिया कि यद्यपि उसने अपना पेट भरने केलिए सन्यास धारण किया था, फिर भी अपने पास आये हुए दोनों फ़रियादियों को दगा देकर उनके विश्वास का संपादन करना चाहा । इसलिए आँखें बंद कर सूर्य की ओर मुड़ कर अपना एक पैर ज़मीन से आधा टिका कर हाथ उठाये यों बोला–

"सत्य के अन्वेषण में आये हुए बंधुओ, सुनो । यह जीवन अत्यंत ही निरर्थक है, क्षणिक है । प्रिय व्यक्तियों की संगति के द्वारा प्राप्त होने वाला सुख स्वप्न के दृश्यों की भांति अवास्तविक है । पत्नी, पुत्र, गृहस्थी आदि जादूगर के इंद्रजाल के समान हैं । इसलिए धर्म को छोड़ कोई दूसरा मार्ग नहीं है । कहा जाता हैं, जो व्यक्ति पुण्य कार्य किये बिना अपनी ज़िंदगी बसर करता है, उस की साँस तथा लुहार की भाती की साँस में कोई फ़रक़ नहीं होता । अनैतिक ज्ञान कुत्ते की पूंछ की तरह निरर्थक होता है । वह मक्खियों को उड़ाने व मान की रक्षा करने में काम नहीं देता । वृक्ष का सौंदर्य उस के फूल और फलों में है । दही का सार घी है, कोल्हू के तिल का सार तेल है । इसी प्रकार मानव का सार उसका धर्म है । मैंने आप को सूक्ष्म रूप से धर्म का परिचय दिया है । संक्षेप में बताना हो तो यही कहूँगा कि परोपकार पुण्य है और दूसरों का शोषण पाप है । आप लोग इसी एक बात का स्मरण करके अपना आचरण साफ़ रखिए । बस, परंतु दूसरों की सहायता करने में आप स्वयं खतरे मोल सकते हैं । लेकिन आप अपने स्वार्थ के हेतु कभी दूसरों की हानि न कीजिए ।"

बिलाव के मुँह से वे बातें सुनकर खरगोश तीतर से बोला–"तुम्हारा कहना सत्य है। यह बिलाव सच्चा सन्यासी है। इस की ऊपरी आकृति देख मैं ने गलत समझा। पर इसकी बातों ने मुझ में सच्चा विश्वास भर दिया। हमारा फ़ैसला करने के लिए इस से हम निवेदन करेंगे।"

"अच्छी बात है, परंतु यह जन्मतः जंगली बिलाव है। हम दोनों का जन्मजात शत्रु है यह। इसलिए इस के द्वारा हमारा कोई खतरा न हो, अतः हम दूर खड़े होकर ही इससे बात करेंगे।" तीतर ने समझाया।

इसके बाद वे दोनों बोले–"हे महात्मा सुबोधक, हम दोनों के बीच विवाद उठ खड़ा हुआ है। आप तो धर्मशास्त्र के ज्ञाता हैं; अतः आप हमारा फ़ैसला कीजिए। हम दोनों में जिसका पक्ष अन्याय पूर्ण हो, उसे आप खा सकते हैं।"

"दोस्तो, प्राणियों का वध करके भक्षण करना नरक का कारण बन जाता है। इसलिए यह आदत मैं ने कभी की छोड़ दी है। अहिंसा परम धर्म है। मांस-भक्षी प्राणी भी यदि खूंख्वार जानवरों का वध करते हैं तो वे रौरव नरक के भागी हो जाते हैं। ऐसी हालत में साधु प्रकृति के प्राणियों का वध करने वाले नरक की यातनाओं से कैसे बच सकते हैं? यज्ञ के समय पशुओं की बलि देने वाले लोग वेदों को सही ढंग से न समझने वाले मूर्ख होते हैं। यदि वृक्षों को काटने, जानवरों का वध करने से मानव को स्वर्ग की प्राप्ति हो जाती है तो नरक में जाने वाला कौन है? मैं अपने कर्तव्य का पालन करके अपनी बुद्धि के अनुसार फ़ैसला करूँगा। मैं वृद्ध हो चुका हूँ। मुझे साफ़ सुनाई नहीं देता। इसलिए तुम लोग मेरे निकट आकर अपनी शिकायत सविस्तार बतला दो। यह भी कहा जाता है कि जो व्यक्ति घमण्ड, लोभ या क्रोधवश गलत फ़ैसला देता है, वह नरक में जाता है। इसलिए मुझ पर विश्वास करके मेरे निकट आओ और अपने विवाद का स्पष्टीकरण करो।"

१८८. क्या यही गण्डभेरुण्ड है?

संसार में जब राक्षसी चिपकलियाँ अस्तित्व में थीं, उन दिनों में आर्कियोप्टेरिक्स नामक उड़नेवाला एक जानवर था। उसके पंखों तथा पूँछ में पर हुआ करते थे। उसके मुँह में दांत होते थे। इस चित्र में आप बवेरिया की शिला-परतों में अंकित उसकी देह की मुद्रा को देख सकते हैं।
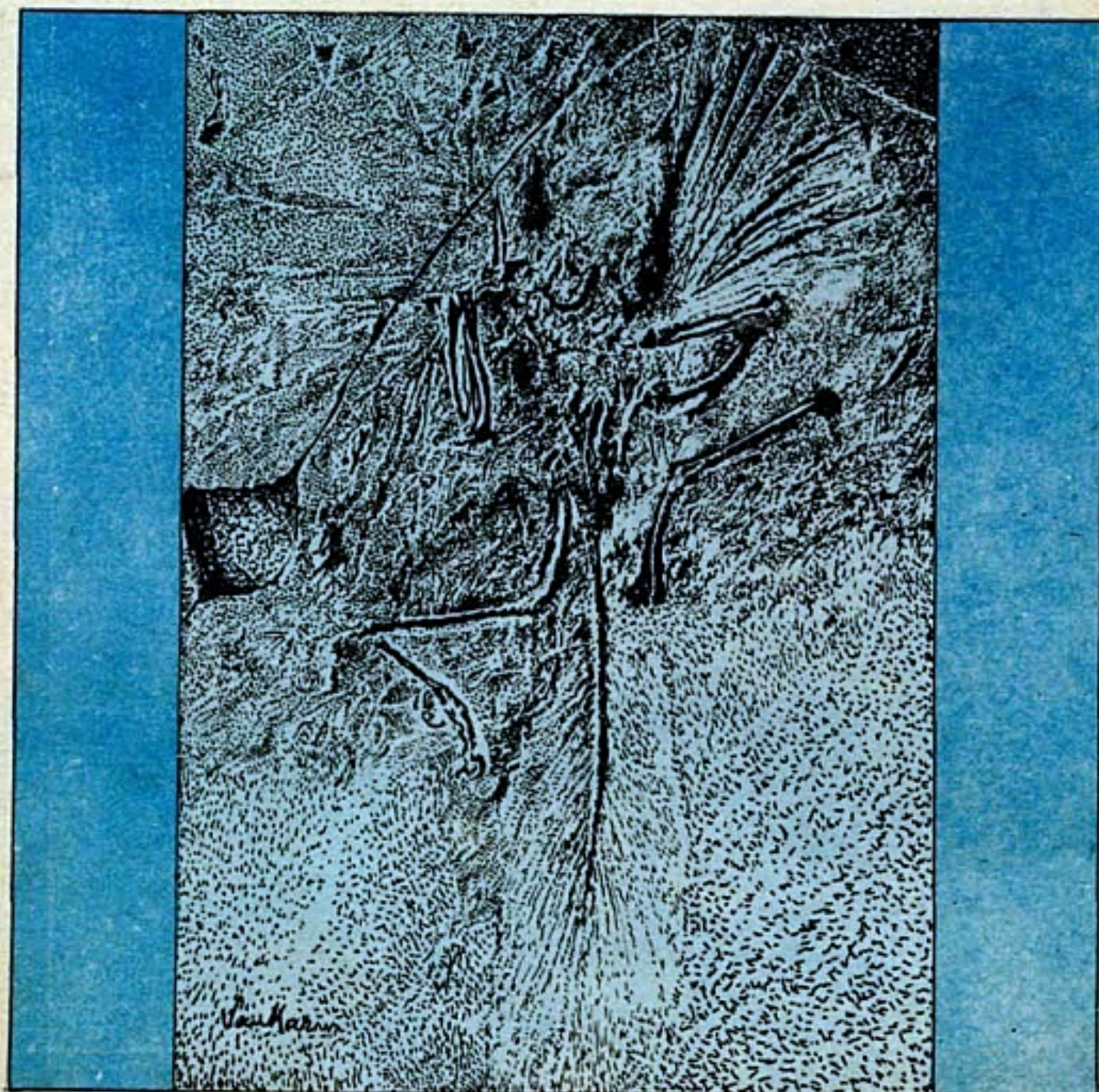
माया सरोवर

[२०]

[जयशील ने भलीभांति समझ लिया कि माया सरोवर तक पहुँचने के लिए सर्पनख की सहायता नितांत आवश्यक है। सर्पनख ने सर्वप्रथम अपने छोटे भाई का पता लगाना चाहा। इसलिए नर वानर का मालिक कृपाणजित जब उसे दिखाई दिया, तब सर्पनख ने उसका पीछा किया। कृपाणजित को मृत्यु-भक्षी वृक्ष की डाल ने कस लिया। बाद...]

मृत्यु भक्षी वृक्ष की एक डाल ने जब कृपाणजित के सर को पकड़कर ऊपर खींच लिया, तब निकट की दो डालों में से एक ने उसका कंधा पकड़ लिया और दूसरे ने उसके हाथ को कस लिया। कृपाणजित उनकी पकड़ से अपने को बचाने केलिए हाथ मारते जोर-जोर से चिल्लाने लगा– "मुझे कृपया बचाइए। मैं मरा जा रहा हूँ।"

कृपाणजित के आर्तनाद सुनने वाले नाटी जाति के सिपाहियों ने उसकी मदद करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। किसी भी हालत में मृत्यु भक्षी वृक्ष के निकट जाना उनके लिए खतरनाक़ था। उल्टे कृपाणजित ने उन्हें इस के पूर्व अनेक प्रकार से सताया भी था। लेकिन उन में से कुछ लोगों ने कृपाणजित के वाहन जलाश्व को भागने से पकड़ लिया।

थोड़ी दूर पर पहाड़ी टीले पर खड़े हुए जयशील तथा सिद्ध साधक टीले से उतर कर दौड़े-दौड़े वृक्ष के निकट पहुँचे ही थे, तभी सर्पनख जलाश्व पर वहाँ आया और बोला–"मेरे छोटे भाई का पता जानने वाला यही एक मात्र व्यक्ति है। यह मरता जा रहा है, इसे बचाना होगा।" यों कहते उसने मृत्यु भक्षी वृक्ष की एक डाली पर वार किया।

सर्पनख की तलवार के आघात से वृक्ष जड़ सहित एक बार हिल उठा, दूसरे ही क्षण मंद कराहट सुनाई दी। तभी अंगूठे के परिमाण की एक लंबी डाली सांप की भांति ठेढ़ी होकर नीचे झुक आई और सर्पनख के कंठ से लिपट गई। सर्पनख चिल्ला उठा–"हे माया सरोवरेश्वर, मुझे बचाओ।" उसकी चिल्लाहट सुन कर जलाश्व भड़क कर भाग गया।

उसी वक़्त जयशील और सिद्ध साधक एक ही छलांग में वहाँ पर आ पहुँचे। सिद्ध साधक सर्पनख के दोनों पैर पकड़ कर नीचे की ओर खींचने लगा, जयशील ने तलवार खींच कर सर्पनख के गले से लिपटी डाली को एक ही वार में काट डाला। सिद्ध साधक ने सर्पनख का सिर इस तरह पकड़ लिया जिससे उसका सर जमीन से टकरा कर फट न जाय। उसे खड़ा करते हुए बोला–"अरे कमबख्त जल प्राणी, तुमने जो दुस्साहस किया, उसके कारण हमें माया सरोवर तक पहुँचने का मार्ग बतलाने वाला नहीं रह जाता।"

सर्पनख अपने दोनों हाथों से कंठ पकड़ कर पीड़ा के मारे एक बार कराह उठा, तब बोला–"मैं जानता था कि माया सरोवरेश्वर अपने सेवकों की खतरों से अवश्य रक्षा करते हैं।"

ये बातें सुन सिद्ध साधक क्रोध में आया, दांत पीसकर बोला–"अबे सर्पनख. क्या तुम मानते हो कि इस वक़्त तुम्हारी रक्षा तुम्हारे मालिक ने की है? तुम्हारी मूर्खता पर मुझे हँसी आती है; हम वक़्त पर यहाँ

न पहुँच जाते तो तुम अब तक नरक के दर्वाजे खटखटाते होते! समझें!"

"भले ही माया सरोवरेश्वर यहाँ पर खुद न आये हो, लेकिन आप दोनों के भीतर प्रवेश करके उन्हों ने मेरी रक्षा की है।" यों जवाब देकर सर्पनख ने मृत्युभक्षी वृक्ष की ओर देखा, वहाँ पर डालों में लटकनेवाले कृपाणजित पर दृष्टि पड़ते ही चिल्ला उठा– "मेरे छोटे भाई सर्पस्वर का पता जानने वाला मर रहा है, उसे बचाना होगा।" यों कहते वह वृक्ष की ओर दौड़ने को हुआ।

जयशील ने उस का कंधा पकड़ कर झकझोर दिया, वहाँ के सिपाहियों से पूछा– "तुम्हारा सेनापति कहाँ है? लगता है कि जान के डर से इस का मति-भ्रमण हो गया है। नदी में इसे चार-पांच बार डुबोकर किनारे पर इसे सुखा दो। तब जाकर इसके होश ठिकाने लग जायेंगे।"

नाटी जाति का सेनापति तथा उसके अनुचरों ने सर्पनख को पकड़ लिया। इस पर वह बोला–"मेरा मति-भ्रमण नहीं हुआ है। मैं सब कुछ समझ रहा हूँ। तुम लोग नाटी जाति के हो; और ये हैं जयशील तथा कापालिक। हम लोग इस वक़्त मगर-मच्छोंवाली नदी के किनारे हैं।"

"अबे जलप्राणी, अब तुम बकवास बंद करो। तुमको हम मगर-मच्छों का आहार बनाने जा रहे हैं।" यों कहते नाटी जाति के लोग सर्पनख को नदी की ओर खींच ले गये।

उसी वक़्त नाटी जाति की रानी वहाँ अपने रथ पर आ पहुँची। शंकरसिंह तथा उस के अनुचर हाथ बांधे सर झुकाये रथ के निकट खड़े थे। रानी को देखते ही जयशील बोला–"तुम्हारी जाति के बीच जो आपसी कलह हुआ, उससे लाभ उठाने की बात सोचने वाले कृपाणजित की इस मृत्युभक्षी वृक्ष ने बलि ले ली है। अब तुम सब लोग आराम से अपने दिन बिताओ। हम अपने रास्ते चले जायेंगे। मगर जाने के पूव हम इस मृत्यु भक्षी वृक्ष को अग्नि

की आहुति देना चाहते हैं। यह अनेक लापरवाह लोगों की जान ले सकता है। यह जानते हुए हम भोले लोगों को इसके शिकार होने देना नहीं चाहते!"

"महाशय, ऐसा ही कीजिए! आप लोगों की सहायता केलिए हम अत्यंत कृतज्ञ हैं। नर वानर के मालिक का तो अंत हो गया, मगर वह भयंकर नर वानर कहीं जंगलों में भटकता होगा। हमें दिन-रात सावधान रहना पड़ेगा। वरना हमारी बहुत बड़ी हानि होने की संभावना है।" रानी ने कहा।

जयशील ने रहम भरी दृष्टि डाल कर कहा–"जलाश्व पर आया हुआ सर्पनख नामक व्यक्ति हमारे हाथों में आ गया है। उस के छोटे भाई को नर वानर उठा ले गया है। सर्पनख की सहायता की हमें जरूरत है, इसलिए उस के छोटे भाई के अन्वेषण में अगर वह भयंकर नर वानर हमें दिखाई दिया तो हम जरूर उसे मार डालेंगे।"

"उसे मारना नहीं, पालतू बना कर मैं उसे अपने वाहन के रूप में इस्तेमाल करना चाहता हूँ। अरे, आग ले आओ। मृत्यु-भक्षी वृक्ष को जला कर खाक कर देना है।" ये शब्द कहते सिद्ध साधक ने चारों तरफ़ नज़र डाली।

नाटी जाति के चार-पांच सिपाही जलने वाले मशालों के साथ आगे आये। सिद्ध साधक एक मशाल अपने हाथ में लेकर बोला–"प्राणियों को खाकर ज़िंदा रहनेवाला वृक्ष है यह। इसलिए इसमें मांस तथा चर्बी के लक्षण होंगे। दूर से ही जलने वाला मशाल फेंक कर देखेंगे, आखिर क्या होता है?" इन शब्दों के साथ वह मशाल को पेड़ की ओर फेंकने को हुआ, तभी पीछे से यह पुकार सुनाई दी–"रुक जाओ! अरे पापी! तुम चिरंजीवी मृत्युभक्षी वृक्ष को खाक बना देना चाहते हो? यह काम तुम से बन सकता है? अरे दुष्ट! तुम यह धृष्टता करने की कोशिश न करो। अपने प्राण

तुम्हारे लिए प्यारे हैं, तो रुक जाओ।" सिद्ध साधक और जयशील ने सिर घुमा कर पुकार की दिशा में देखा। नाटी जाति से थोड़ा ऊँचे क़दवाला जिसके गले में मनके व कंधे पर कुल्हाड़ी थी, केश बिखेरे, उछलते आकर जयशील और सिद्ध साधक के सामने आ खड़ा हुआ।

सिद्ध साधक ने उसके वक्ष पर शूल टिका कर पूछा—"अबे, तुम कौन हो? माहकाल के भक्त मुझे तुम पापी कहने की हिम्मत कैसे कर सके? इसी क्षण तुम मरने को तैयार हो जाओ।"

आगंतुक ने सिद्ध साधक की आँखों में निर्भयता पूर्वक देखा, हाथ हिलाते हुए कहा—"मैं चिरंजीवी मृत्यु भक्षी वृक्ष का पुजारी हूँ। इसके पूर्व तुम ने उस वृक्ष पर तलवार का वार किया, उस समय तुमने क्या उसकी कोई कराहट नहीं सुनी? तुम बहरे तो नहीं?"

ये शब्द सुनने पर जयशील ने उस पुजारी की ओर शंका भरी दृष्टि दौड़ाई, तब पूछा—"पेड़ के पीछे रह कर तुम्हीं कराह उठे थे न? सच कहो।" यों कहते उसने फिर उस की गर्दन पर हाथ रखा।

नाटा पुजारी थोड़ा भी विचलित हुए विना बोला—"हाँ, हाँ, मैं ही कराह उठा था! मगर कराहने का आदेश देनेवाली मृत्यु देवी वृक्ष के भीतर समाविष्ट हुई हैं। मैं उन का पुजारी हूँ, सेवक हूँ।"

जयशील ने सिद्ध साधक की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि दौड़ाई। साधक ने पुजारी के कंधे पर से कुल्हाड़ी लेकर उसके फाल की परीक्षा ली, तब कहा—"अरे कमबख्त चालाक, आज से मृत्यु भक्षी वृक्ष की आयु समाप्त हो गई है। उस के पुजारी बने तुम्हारी नौकरी भी समाप्त समझ लो। तुम्हारे हाथ में तेज धारवाली कुल्हाड़ी है। इसलिए तुम जंगल में कहीं लकड़ी काट कर अपना पेट भर लो। भोले-भाले प्रणियों के प्राण लेने वाला यह मृत्युभक्षी वृक्ष जल कर राख होने जा रहा है।" ये शब्द कहते

तुम्हारे लिए प्यारे हैं, तो रुक जाओ।" सिद्ध साधक और जयशील ने सिर घुमा कर पुकार की दिशा में देखा। नाटी जाति से थोड़ा ऊँचे क़दवाला जिसके गले में मनके व कंधे पर कुल्हाड़ी थी, केश बिखेरे, उछलते आकर जयशील और सिद्ध साधक के सामने आ खड़ा हुआ।

सिद्ध साधक ने उसके वक्ष पर शूल टिका कर पूछा–"अबे, तुम कौन हो? माहकाल के भक्त मुझे तुम पापी कहने की हिम्मत कैसे कर सके? इसी क्षण तुम मरने को तैयार हो जाओ।"

आगंतुक ने सिद्ध साधक की आँखों में निर्भयता पूर्वक देखा, हाथ हिलाते हुए कहा–"मैं चिरंजीवी मृत्यु भक्षी वृक्ष का पुजारी हूँ। इसके पूर्व तुम ने उस वृक्ष पर तलवार का वार किया, उस समय तुमने क्या उसकी कोई कराहट नहीं सुनी? तुम बहरे तो नहीं?"

ये शब्द सुनने पर जयशील ने उस पुजारी की ओर शंका भरी दृष्टि दौड़ाई, तब पूछा–"पेड़ के पीछे रह कर तुम्हीं कराह उठे थे न? सच कहो।" यों कहते उसने फिर उस की गर्दन पर हाथ रखा।

नाटा पुजारी थोड़ा भी विचलित हुए विना बोला–"हाँ, हाँ, मैं ही कराह उठा था! मगर कराहने का आदेश देनेवाली मृत्यु देवी वृक्ष के भीतर समाविष्ट हुई हैं। मैं उन का पुजारी हूँ, सेवक हूँ।"

जयशील ने सिद्ध साधक की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि दौड़ाई। साधक ने पुजारी के कंधे पर से कुल्हाड़ी लेकर उसके फाल की परीक्षा ली, तब कहा–"अरे कमबख्त चालाक, आज से मृत्यु भक्षी वृक्ष की आयु समाप्त हो गई है। उस के पुजारी बने तुम्हारी नौकरी भी समाप्त समझ लो। तुम्हारे हाथ में तेज धारवाली कुल्हाड़ी है। इसलिए तुम जंगल में कहीं लकड़ी काट कर अपना पेट भर लो। भोले-भाले प्रणियों के प्राण लेने वाला यह मृत्युभक्षी वृक्ष जल कर राख होने जा रहा है।" ये शब्द कहते

जलने वाले मशाल को सिद्ध साधक पेड़ की ओर फेंकने को हुआ, तभी पुजारी ने उछल कर उस का हाथ पकड़ लिया।

"अरे दुष्ट, महाकाल के इस भक्त का स्पर्श करने का तुम दुस्साहस करते हो?" यों कड़क कर सिद्ध साधक ने उस का हाथ झटक दिया।

नाटा पुजारी दूर जा गिरा, फिर बोला— "महाशय, यह मृत्यु भक्षी वृक्ष केवल दुष्टों को छोड़ धर्मात्माओं को नहीं मारता। मेरी बात पर विश्वास कर लो।"

तब तक यह सारा तमाशा देखनेवाला जयशील आगे आया, नाटे पुजारी को पकड़ कर बोला—"तुम धर्मात्मा हो न? तुम ने कभी किसी प्रकार का धोखा-दगा नहीं दिया है न?"

"महाशय, इस में कोई संदेह भी है?" पुजारी ने जवाब दिया।

पुजारी के मुंह से ये शब्द निकलने की देरी थी, उसे ऊपर उठा कर मृत्युभक्षी वृक्ष की ओर फेंकने को हुआ। तभी पुजारी थर-थर कांपते चीख उठा—"महाशय, मुझे प्राणों के साथ छोड़ दो। भयंकर मृत्यु का शिकार मत बना दो।"

जयशील ने हँसते उसे नीचे उतारा, तब कहा—"सिद्ध साधक, अब हमें अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाना है, मृत्यु भक्षी वृक्ष में आग लगा दो।"

सिद्ध साधक ने नाटे सिपाहियों के हाथों से जलने वाले मशाल लेकर वृक्ष पर फेंक दिया। दूसरे ही क्षण तेल से भीगी सूखी लकड़ी की भांति मृत्यु भक्षी वृक्ष धुएं व शोलों के साथ जलने लगा।

जयशील ने वृक्ष की डालों में लटकने वाले कृपाणजित के शव की ओर देख गहरी साँस ली, फिर कहा—"यह कृपाणजित अमरावती नगर के राजा के अश्वदल का सरदार है। एक जुएँ के गृह में इसके साथ मेरा जो झगड़ा हुआ, उसकी वजह से मुझे इस प्रकार जंगलों में भटकना पड़ रहा है। दुष्टों के लिए अच्छी मौत दुर्लभ

होती है। उसी गृह में देवशर्मा नामक मेरा एक मित्र था। वह भी अमरावती से चला गया है, न मालूम कहाँ-कहाँ भटक रहा होगा !"

"माया सरोवर पहुँच कर हिरण्यपुर के राजा के बच्चों को बंधन मुक्त करने के पूर्व वह भी हमें कहीं न कहीं अवश्य दिखाई देगा। जो लोग भूले-भटके होते हैं, उन्हें नगरों की अपेक्षा जंगलों में ढूंढ कर पकड़ लेना कहीं सरल होता है।" सिद्ध साधक ने समझाया।

"हाँ साधक, तुम्हारी बातें सुनने पर मुझे भी ये विश्वास करने योग्य प्रतीत होती हैं; चलो; अरे, सर्पनख कहाँ?" यों कहते जयशील ने चारों ओर नज़र दौड़ाई।

सर्पनख एक जलाश्व पर सवार हो दूर पर स्थित पहाड़ों की ओर देख रहा था। वह गंभीरतापूर्वक सोच रहा था। जयशील ने वहीं पर स्थित दूसरे जलाश्व को सिद्ध साधक को दिखा कर कहा— "सिद्ध साधक, हम इस जलाश्व को यहीं पर यूं ही क्यों छोड़ दे? हम में से कोई न कोई इसका उपयोग कर सकते हैं न?"

"जयशील, यह जलाश्व तुम्हारा ही होगा। मैं पैदल तुम्हारा अनुसरण कर सकता हूँ। जब भी वह भयंकर नर वानर मेरी नज़र में आया तो उसे मिनटों में पालतू बना कर मैं उसे अपना वाहन बना लूंगा।" साधक ने उत्तर दिया।

"साधक, तुम जो कहते हो, सो करके दिखा सकते हो। क्या अब हम चलें?" तब जयशील वहाँ पर स्थित रानी, शंकरसिंह तथा नाटी जाति के सिपाहियों को लक्ष्य करके बोला—"तुम्हारा प्रबल शत्रु कृपाणजित जलने वाले उस मृत्यु भक्षी वृक्ष के साथ राख होता जा रहा है। अब तुम लोगों को डरने की कोई आवश्यकता नहीं है; सुखपूर्वक जिओ। हम अपने रास्ते जा रहे हैं।"

इस के बाद जयशील जलाश्व पर तथा उसके पीछे सिद्ध साधक चल पड़े। नाटी जाति के लोगों के जयकारों से सारा जंगल गूंज उठा। उस जयनाद को सुन कर सर्पनख ने सिर घुमा कर देखा, दूर पर जाने वाले जयशील तथा सिद्ध साधक को पुकार कर कहा—"जयशील, सिद्ध साधक, मेरे छोटे भाई की खोज करनी है न? रुक जाओ! मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने अपने अश्व को उनकी ओर तेजी से दौड़ाया।

जयशील ने सर्पनख की ओर एक बार ध्यानपूर्वक देखकर कहा—"लगता है कि नदी में स्नान करने पर तुम बिलकुल स्वस्थ हो गये हो! अब तुम अपने रास्ते जा सकते हो। हम दोनों माया सरोवर का पता लगा कर उस के मालिक के टुकड़े-टुकड़े कर देंगे और उन माँस खंडों को जलपक्षी तथा जंगली जानवरों का आहार बना डालेंगे।"

ये शब्द सुन कर सपनख ने अपने चेहरे पर अनिच्छा व्यक्त की; पर उसने कोई उत्तर नहीं दिया। इस के बाद एक घड़ी भर तीनों जंगल में यात्रा करके उस प्रदेश पर पहुँचे, जहाँ इसके पूर्व सिद्ध साधक तथा जयशील जल प्रपात से नदी में गिर पड़े थे। जयशील अपना पूर्वानुभव सर्पनख को सुनाने जा रहा था, तभी सर्पनख ने हाथ उठा कर दूर की एक पहाड़ी गुफा की ओर संकेत करके कहा—"उस गुफा में से झांकने वाला भयंकर जानवर कहीं नर वानर तो नहीं है?"

"हाँ, हाँ, नर वानर ही है।" यों कह कर जयशील विस्मय में आ गया। तभी नर वानर भयंकर गर्जन करते गुफा में से बाहर कूद पड़ा। दूसरे ही क्षण भीकर गर्जन करते मकर केतु का वाहन जलग्रह गुफा से निकल कर नर वानर पर आक्रमण कर बैठा और अपनी सूंड से नर वानर को कस लिया।

(और है।)

दो रूप

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास गया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा– "राजन, तुम अगर किन्हीं अपूर्व शक्तियों को प्राप्त करने केलिए श्रम उठा रहे हो तो उन्हें विश्वश्लोक की भांति अपात्र व्यक्ति को मत प्रदान करो। मैं उस की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में विश्वश्लोक नामक एक ब्राह्मण था। वह मंत्र-विद्याओं के प्रति काफ़ी अभिरुचि रखता था। उन्हें प्राप्त करने केलिए वह सिद्धों की खोज में पहाड़ और जंगल छानने लगा। आखिर एक दिन विन्ध्य पर्वतों में एक सिद्ध गुरु से उस की मुलाक़ात हुई। विश्वश्लोक ने उस सिद्ध की सेवा करके उस

बेताल कथाएं

के द्वारा एक साथ दो रूप धारण करने की विद्या प्राप्त की।

सिद्ध गुरु ने विश्वश्लोक को समझाया–"तुम इस विद्या का परिचय ऐसे ही व्यक्ति को दो, जिस के द्वारा दुनिया की भलाई हो सकती हो।" इस के बाद गुरु ने विश्वश्लोक के द्वारा इस बात की शपथ भी कराई।

विश्वश्लोक अपने गुरु से अनुमति लेकर चल पड़ा। अनेक देशों का भ्रमण करते हुए उस ने अपनी इस विद्या का प्रदर्शन किया और अपार यश भी प्राप्त किया।

इसी प्रकार भ्रमण करते वह कलिश देश में पहुँचा। वहाँ का राजा बड़ा ही उदार था। महा दानी था। याचकों को खाली हाथ कभी न भेजता था। वही राजा विश्वश्लोक को अपने गुप्त कक्ष में ले जाकर बोला–"महात्मा, आप की द्विशरीर धारण की शक्ति अपूर्व है, अद्‌भुत है। आप ने शायद सुना होगा कि मेरे शासन से जनता कैसे संतुष्ट है। अगर आप मुझे दो शरीर धारण करने की शक्ति प्रदान करें तो मैं जनता की और अच्छी तरह से सेवा कर सकता हूँ।"

ये बातें सुन विश्वश्लोक चकित रह गया। आज तक अनेक राजाओं ने उस की विद्या की प्रशंसा करके उस का सत्कार किया था, पर किसी ने उस विद्या का ज्ञान कराने की प्रार्थना न की थी। भविष्य में उस के सामने यह समस्या भी उत्पन्न हो सकती है। यों सोच कर विश्वश्लोक ने उत्तर दिया–"महाराज, मुझे इस संबंध में सोचना पड़ेगा। यदि मैं इस विद्या का रहस्य आप को बताना चाहूँगा, तो मैं छे महीनों के अंदर पुनः लौट आऊँगा।" यों समझा कर विश्वश्लोक वहाँ से चला गया।

इस के बाद एक दूसरे राज्य की राज कुमारी ने विश्वश्लोक की विद्या का प्रदर्शन देख उस से कहा–"महानुभाव, आप मेरे लिए पितृतुल्य हैं, इसलिए मैं अपनी जटिल समस्या आप के सम्मुख रख रही हूँ।

मेरे सौंदर्य पर मुग्ध हो मेरे पड़ोसी राज्यों के दो युवराज मेरे साथ विवाह करना चाहते हैं। उन में से किसी एक के साथ मेरा विवाह हो जाय तो दूसरा युवराज क्रुद्ध हो मेरे राज्य पर आक्रमण करके इसे सर्वनाश करेगा। वे दोनों हम से बलवान हैं। यदि दो शरीर धारण करने की विद्या आप मुझे प्रदान करेंगे तो मेरी समस्या हल हो जाएगी और जनता का क्षय न होगा।"

"बेटी, छे महीने बाद मैं अपना निर्णय तुम्हें बताऊँगा।" यों जवाब देकर विश्वश्लोक वहाँ से चला गया।

इस के थोड़े दिन बाद काश्मीर में राजवैद्य से विश्वश्लोक की मुलाक़ात हुई। उसने पूछा—"महानुभाव, राज परिवार में अनेक लोग हैं। सब का इलाज मुझे स्वयं करना है। मेरे दो हाथ काम नहीं दे पा रहे हैं। आप मुझ पर अनुग्रह करके दो शरीर धारण करने की विद्या सिखलायेंगे तो मैं आप के प्रति कृतज्ञ बना रहूँगा।"

विश्वश्लोक राज वैद्य को भी अपना निर्णय छे महीने में सुनाने की बात कह कर चला गया। एक बार वह चेर राज्य में गया। वहाँ की जनता का जीवन सुखमय न था। लुटेरों से वे लोग परेशान थे। गंगोत्री नामक एक डाकू था, जिसके नाम से उस राज्य के लोग थर-थर कांप उठते थे। राजा ने उसे दबाने की सब तरह से कोशिश की, पर वह असफल रहा।

चेर राजा ने विश्वश्लोक की विद्या का प्रदर्शन देख सोचा कि अपनी प्रजा के लिए उस विद्या का सार्वजनिक प्रदर्शन कराया जाय तो अच्छा होगा। वहाँ की जनता एक ही व्यक्ति का एक ही समय में दो रूप धारण करते देख बहुत प्रसन्न हुई।

उस रात को विश्वश्लोक के निकट जाकर डाकू ने धमकी दी—"जानते हो, मैं कौन हूँ? मैं प्रसिद्ध डाकू गंगोत्री हूँ। मैंने तुम्हारी विद्या का प्रदर्शन देखा है। तुम दो शरीर धारण करने की विद्या मुझे सिखला दो, वरना मैं तुम्हारा वध कर डालूंगा।"

विश्वश्लोक ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया– "बस, तुम्हें यही एक विद्या चाहिए ? या अन्य मंत्र-तंत्र भी चाहिए ?"

"मंत्र-तंत्र मुझे नहीं चाहिए। मुझे यही एक विद्या चाहिए।" डाकू ने कहा।

"अच्छी बात है, मैं तुम्हें सिखाऊँगा। लेकिन मुझे यह बताओ कि यह विद्या सीख कर तुम इसका प्रयोग किस कार्य के वास्ते करोगे ?" विश्वश्लोक ने पूछा।

"महानुभाव, छोटी-मोटी चोरियाँ करके मैं ऊब गया हूँ। अगर लूटना ही है तो एक ही दफ़े राजा के खजाने को ही लूटना है। यह काम मुझ अकेले से बन नहीं सकता। मुझे जैसे एक और व्यक्ति की मुझे मदद चाहिए।" डाकू गंगोत्री ने जवाब दिया।

"मगर मेरी एक शर्त है। तुम जो खजाना लूटोगे, उस का चौथा हिस्सा मुझे देना होगा। तुम्हारे दो शरीरों में से जो भी खतरे का शिकार होगा, वही खतरा दूसरे शरीर को भी होगा। साथ ही तुम्हें मेरी अनुमति के बिना यह विद्या किसी और को नहीं सिखानी है। यह मंत्र झूठ बोलने वाले पर काम न देगा। मेरी शर्तें तुम्हें मंजूर हैं?" विश्वश्लोक ने पूछा।

"महानुभाव, यह मंत्र केवल कल रात को काम देगा तो पर्याप्त है। इस के बाद मुझे इस की कोई ज़रूरत ही नहीं है।" गंगोत्री ने कहा।

इस के बाद विश्वश्लोक ने डाकू गंगोत्री को शास्त्र-विधि से मंत्र सिखा कर भेज दिया, सीधे राजा के पास जाकर खजाना लूटने का समाचार सुनाकर राजा के द्वारा सत्कार पाया, तब वह अपने रास्ते चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा– "राजन, विश्वश्लोक ने कलिंग के राजा, राज वैद्य तथा राज कुमारी को जो विद्या सिखाने से इनकार किया, वह डाकू को क्यों सिखाई? क्या इस ख्याल से सिखाई कि न सिखाने पर उसके प्राणों केलिए खतरा है? या खजाने के लूटने

पर चौथा हिस्सा प्राप्त करने के लोभ में पड़ कर?" इस संदेह का समाधान न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इसपर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया— "विश्वश्लोक अगर धन का लोभ रखता तो अपनी विद्या राजा, राज वैद्य तथा राजकुमारी को अवश्य सिखला देता। अलावा इसके गंगोत्री के द्वारा प्राप्त होने वाले चौथे हिस्से की प्रतीक्षा किये बिना उस ने पहले ही यह रहस्य चेर राजा को बतला दिया। उसे प्राणों का डर भी नहीं था। वह अपनी विद्या के बल पर बच सकता था। वास्तविक बात यह थी कि सिद्ध ने उसे बताया था कि यदि जनता का हित हो सकता है तो उस विद्या का प्रयोग करे। एक डाकू को वह विद्या सिखाने में जनता की भलाई हो सकती थी। क्यों कि डाकू झूठ बोल नहीं सकता था। वह खजाना लूटने जाएगा। राजा को विश्वश्लोक ने पहले ही यह खबर कर दी थी। इसलिए डाकू को खतरा है। चाहे किसी भी शरीर को खतरा उत्पन्न हो जाय तो दूसरा शरीर उस से बच नहीं सकता। इसलिए गंगोत्री अपने कार्य में विफल होगा। इस से चेर राज्य की जनता सुखी होगी। यह लोक-हित का कार्य उस विद्या को कलिंग के राज आदि को देने से संपन्न नहीं हो सकता था। एक बात और है—विश्वश्लोक ने गंगोत्री से पूछा था, क्या तुम्हें दो शरीर अलग होने का मंत्र पर्याप्त है? पर उन दोनों के एक होने का मंत्र सिखाने की प्रार्थना डाकू ने नहीं की। चोरी के माल में से हिस्सा मांगने के पीछे भी एक उद्देश्य रहा है। अगर किसी कारणवश खजाने को लूटने का कार्य निर्विघ्न संपन्न हो जाएगा तो जब डाकू विश्वश्लोक को अपना हिस्सा देने आएगा तब वह गंगोत्री को राजा के सिपाहियों के हाथ पकड़ा सकता है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

रखवाला और पटवारी

एक गाँव में एक पटवारी था। उस के एक मकई का खेत था। उस की रखवाली करने पटवारी ने गौतम नामक एक व्यक्ति को मासिक वेतन पर नियुक्त किया। वह अत्यंत विश्वासपात्र था।

एक दिन पटवारी के आदेश पर गौतम ने एक टोकरी भर भुट्टे तोड़कर ला दिये। इस पर पटवारी की पत्नी ने कहा–" बेचारे को चार भुट्टे दे दो।"

"इतने बड़े खेत की रखवाली करने वाले ने क्या चार भुट्टे तोड़ कर खा लिया न होगा?" पटवारी ने जवाब दिया। यह बात गौतम ने शहर में रहने वाले अपने रिश्तेदार कोत्वाल से कही।

उसी साल पटवारी कर वसूली करके जमा करने जा रहा था, तब सिपाहियों ने आकर उसे राजा के पास चलने को कहा।

"राजा ने मुझे क्यों बुला भेजा? मैं ने तो ईमानदारी से काम किया है?" पटवारी ने पूछा। "बड़े खेत की रखवाली करने वाला अगर चार भुट्टे तोड़ लेता है तो क्या इतना सारा धन वसूलने वाले ने क्या थोड़ा धन हड़प न लिया न होगा?" सिपाहियों ने मजाक़ किया।

पटवारी ने सोचा कि ये लोग कोई स्वांग रच रहे हैं, पर उस दिन से पटवारी नौकरों के प्रति उदारता पूर्वक व्यवहार करने लगा।

पैसे के आँसू

अचल ग्राम का निवासी रघुनाथ अधेड़ उम्र का था। उस की पत्नी का देहांत हो चुका था। उस के एक नाती था जो उस की मृत पुत्री का लड़का था। नाती का नाम गुणी था जिसको रघुनाथ प्राणों से अधिक प्यार करता था। पर गुणी के व्यवहार से रघुनाथ असंतुष्ट था। क्यों कि रघुनाथ सूद का जो व्यापार करता था, उसे गुणी घृणा की दृष्टि से देखता था। रघुनाथ ग्रामवासियों की ज़रूरतों के समय भारी सूद लेकर कर्ज देता था, इस तरह उसने काफ़ी धन कमाया, मगर वह एक दरिद्र की ज़िंदगी बिताता था और गुणी को भी इसी प्रकार रहने पर ज़ोर देता था।

रघुनाथ का घर उजड़ता जा रहा था, गुणी ने पूछा—"नानाजी, मकान की मरम्मत क्यों नहीं कराते?" पर रघुनाथ यही जवाब देता—"बेटे, पैसे कहाँ हैं जो मैं मरम्मत कराऊँ?"

गुणी जानता था कि लोहे की तिजेरी में चमाचम चमकने वाले सोने व चांदी के सिक्के भरे हुए हैं, लेकिन रघुनाथ खर्च करने को तैयार न था।

गुणी ने गाँव की पाठशाला की पढ़ाई समाप्त की, शहर में जाकर हाई स्कूल की पढ़ाई भी पूरी कर दी। इस पर रघुनाथ ने उसे समझाया—"बेटा, अब ज़्यादा पढ़ कर क्या करोगे? सूद का व्यापार संभाल लो। मैं बूढ़ा होता जा रहा हूँ।"

"नानाजी, मैं पाप से भरा यह व्यापार कभी नहीं करूँगा।" गुणी ने साफ़ कहा।

"अरे, हमारे परिवार में कई पीढ़ियों से चलाया जाने वाला व्यापार है यह। इसे तुम पाप से भरा व्यापार बताते हो?" रघुनाथ ने पूछा।

"नानाजी, लोग जरूरत के वक़्त तुम्हारे पास क़र्ज लेने पहुँच जाते हैं।

श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

तुम उन्हें क़र्ज देते हो। यह तो बड़ी अच्छी बात है। मगर उन से कस कर सूद वसूल करते हो। यही पाप कहलाता है। पुराने दिन अब लद गये हैं। आज के जमाने में किसी को भी मेहनत किये बिना धन नहीं कमाना चाहिए। तुम्हारे पास इतना सारा जो धन है, उसे क्या करोगे?" गुणी ने पूछा।

"अरे कमबख़्त गधे, यह सारा धन तुम्हारे वास्ते ही मैं जुटा रहा हूँ।"

"यह तो पाप की कमाई है। यह धन मुझे नहीं चाहिए। यह धन नहीं, बल्कि गाँव वालों के आँसू के पैसे हैं ये। मैं इसे साबित कर सकता हूँ।" गुणी ने कहा।

"तुम साबित करोगे? अरे, तुम बड़ी लंबी-चौड़ी बातें सीख गये हो। तुम्हें पढ़ा-लिखा कर मैं ने भारी भूल की है।" रघुनाथ ने कहा।

इस पर गुणी ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया—"नानाजी, जो हुआ, सो हो गया। उसकी चिंता करने से क्या फ़ायदा है? तुम्हारी कमाई पाप से भरी हुई है। ये पैसे लोगों के आँसुओं से भीगे हैं।"

"तुम सचमुच साबित कर दिखाओगे? साबित करो, मैं भी तो देख लूं?" रघुनाथ ने चुनौती दी।

"नानाजी, लेकिन मेरी एक शर्त है। इस गाँव में कई बेकार युवक हैं। वे लोग सहकारी कृषि का क्षेत्र चलाना चाहते हैं। इसलिए मैं साबित करूँ, तो तुम्हें उनके लिए आवश्यक पूंजी देनी होगी।" गुणी ने समझाया।

"यह कभी नहीं होने का है।" रघुनाथ ने स्पष्ट कह दिया।

"अच्छी बात है, तुम्हारी तिजोरी का सारा धन रो-रोकर पानी की तरह बह रहा है। अब भी तुम्हारा धन रो रहा है। देखना चाहे तो एक सिक्का ले आओ। मैं दिखा देता हूँ।" गुणी ने कहा।

रघुनाथ घबरा गया। जल्दी जल्दी जाकर तिजोरी में से वह एक सिक्का उठा

लाया और बोला—"देखो, अच्छी तरह से आँखें खोल कर देखो ! यह सिक्का नहीं रो रहा है। तुम मुझे नाहक़ क्यों डरा रहे हो ?"

"नानाजी, मैं तुम्हें डरा नहीं रहा हूँ। यह धन रोने लग गया है। देखो तो सही।" ये शब्द कहते गुणी ने उस सिक्के को अपने हाथ में लिया, धीरे से उसे दबाया। सिक्के से पानी की बूंदें गिरीं।

"जयदेव, धन बिलख रहा है।" ये शब्द कहते हुए रघुनाथ उसी क्षण बेहोश हो गया।

गुणी ने रघुनाथ को गिरते संभाल लिया। उस के मुंह पर पानी छिड़क कर पंखा जलाया, तब वह होश में आया।

होश में आने पर रघुनाथ ने पूछा—"बेटा, क्या वह धन अभी तक रो रहा है?

"फिलहाल उस ने बिलखना बंद कर रखा है। मगर उसे हम तिजोरी में ही बंद कर रखेंगे तो वह ज़रूर रोयेगा। उसे बाहर निकालना होगा। जनता के आँसू अब उन के हित में काम दे, यही करना होगा। इसलिए तुम अपने धन में से थोड़ा हिस्सा गाँव के बेकार युवकों को दो। वे अपनी ज़िंदगी की समस्याओं को हल कर लेंगे।" गुणी ने समझाया।

"वे लोग जो सहकारी कृषि-क्षेत्र चालू करने वाले हैं, उस में अगर तुम्हारा भी हिस्सा हो तो मैं ऐसा ही करूँगा।" रघुनाथ ने कहा।

गुणी ने अपने नाना के चरणों की धूलि सर पर डाल कर कहा—"नानाजी, उस सहकारी कृषि-क्षेत्र का संचालक मैं ही हूँ।"

इस के बाद रघुनाथ ने तिजोरी खोल कर कहा—"गुणी, तुम जितना धन चाहते हो, ले लो बेटा।"

गुणी ने तिजोरी में से थोड़ा धन ले लिया, तिजोरी बंद करके चाभी अपने नाना के हाथ दी।

शीघ्र ही गाँव में सहकारी कृषि क्षेत्र का प्रारंभ हुआ। उस में धान के साथ साथ दूध तथा मुर्गों के पालन के केन्द्र भी स्थापित हुए। गुणी के साथ जो युवक उसके सदस्य बने, सबने बड़ी मेहनत की और एक वर्ष के अन्दर अच्छा लाभ प्राप्त किया। इसे देख पड़ोसी गाँवों के युवक भी उस सहकारी क्षेत्र के सदस्य बने। दो वर्ष के अन्दर वह एक आदर्श पूर्ण कृषि क्षेत्र बना जिससे गाँव में नव जीवन का संचार हुआ।

धीरे धीरे कृषि क्षेत्र ने अपने मूल धन का संपादन किया। गुणी थोड़ा धन ले जाकर अपने नाना को देते हुए बोला—"नानाजी, लीजिए; मैं ने तुम से जो धन क़र्ज लिया था, पूरा का पूरा ले लो। पर बताओ, कितना सूद दे दूं?"

"बेटा, मैं ने तुम्हें थोड़े ही क़र्ज दिया था? मुझे न मूल धन चाहिए और न सूद ही। यह धन गाँव वालों ने मुझे सूद के रूप में दिया था। मैं ने इसे उनके बच्चों के उपयोग केलिए दिया है। मैं उस धन को छूना तक नहीं चाहता।" रघुनाथ ने कहा।

गुणी के मित्रों ने उस से पूछा—"भाई, तुम अपने नाना का दिल कैसे बदल पाये?" गुणी ने धन के रोने की कहानी सुनाई। तब मित्रों ने पूछा—"तुम ने वह जादू कैसे किया?"

मैं ने रूई को भिगोकर कान के पीछे रख लिया। मेरे नाना की आँख बचा कर मैं ने रूई को निकाला और उसे सिक्के के पीछे रख कर दबाया। सिक्के से पानी की बूंदें गिरीं।" गुणी ने रहस्य का उद्घाटन किया।
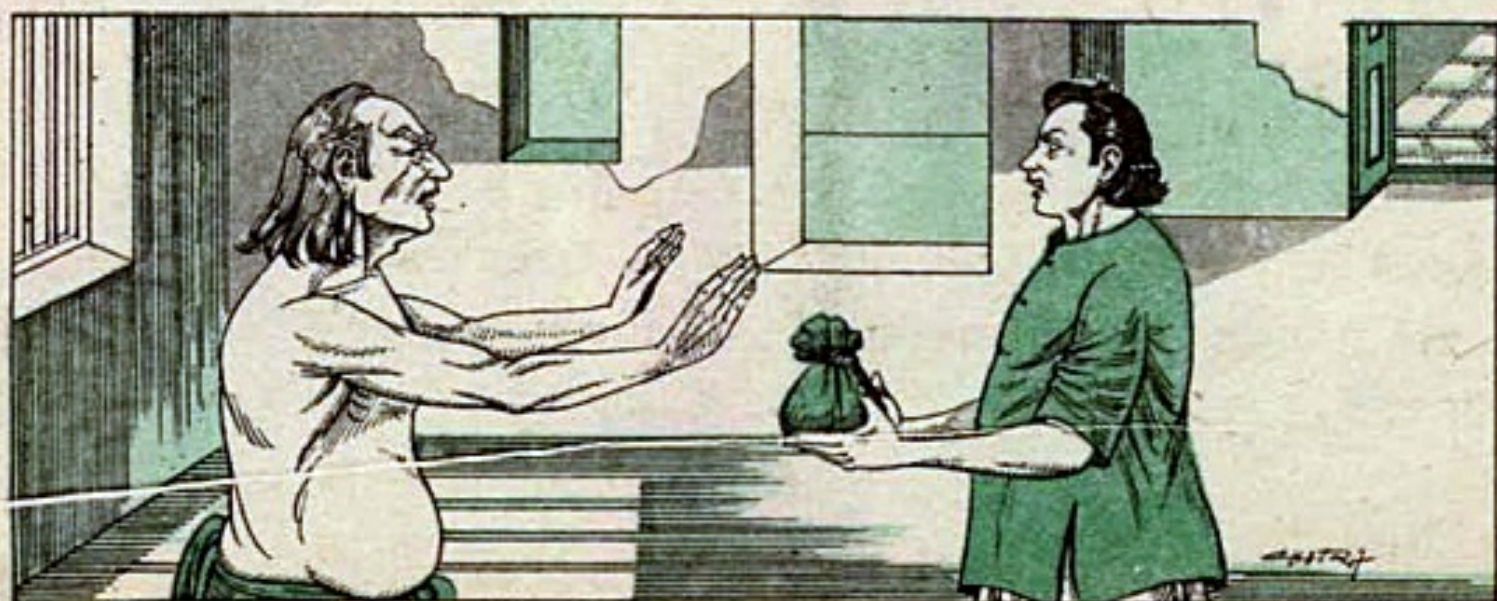
देवता जैसे दामाद

एक गाँव में दो भाई थे। बड़ा भाई गरीब था, छोटे भाई ने व्यापार में अन्यायपूर्वक काफ़ी मात्रा में धन कमाया। दोनों के घर विवाह योग्य कन्याएँ थीं। छोटा भाई भारी दहेज़ देकर अपनी पुत्री का विवाह कर सकता था, मगर बड़ा भाई अपनी पुत्री का विवाह कर न सकता था।

बड़ा भाई छोटे भाई के स्वभाव से भली भांति परिचित था। इसलिए उसने छोटे भाई से किसी तरह की आर्थिक सहायता न माँगी।

इस बीच छोटे भाई की कन्या के लिए शहर से एक अच्छा रिश्ता तै हुआ। महेश नामक एक युवक एक अच्छी नौकरी में था। छोटे भाई के निमंत्रण पर महेश और उस का पिता कन्या को देखने आये।

छोटे भाई की पत्नी अपने घर जो भी काम पड़ता, अपने जेठ की पुत्री वल्ली को रसोई बनाने के लिए बुलवाया करती थी। इस बार भी उसने वल्ली को बुला भेजा और वह अपनी पुत्री की साज-सज्जा में निमग्न हो गई।

महेश और उसके पिता को मिठाइयाँ परोसी गईं, वे उन पकवानों की दिल खोलकर प्रशंसा करने लगे। इस पर छोटे भाई और उसकी पत्नी ने गर्व के साथ बताया कि ये सब मिठाइयाँ उसकी पुत्री ने ख़ुद तैयार की है।

दुलहन का सौंदर्य पूर्ण रूप से कृत्रिम था। वह क़ीमती गहने और रेशमी साड़ी पहने दूल्हे के सामने आई। कन्या को देख वे यह कह कर चले गये कि अपना निर्णय शीघ्र ही उन्हें सूचित करेंगे।

उन के चले जाने पर वल्ली थालियाँ उठा ले जाने उस कमरे के अंदर आई, मेज़ पर कोई पुस्तक देख उसे अपने हाथ में

रामचन्द्र कक्कड

लेकर बोली—"अरे, दूल्हा यह क़िताब ले जाना भूल गये हैं।"

"मुँह बायें खड़ी क्यों हो? उस क़िताब को दूल्हा के हाथ क्यों नहीं दे आती?" छोटे भाई की पत्नी खीझ कर बोली।

वल्ली दौड़ कर दूल्हे के पास पहुँची, महेश के हाथ क़िताब थमाते हुए बोली—"आप अपनी यह क़िताब भूल गये मालूम होता है, लीजिए।"

महेश ने वल्ली की ओर विस्मय के साथ देखा। यद्यपि वह साधारण वस्त्र पहने हुए थी, फिर भी उस का सहज सौंदर्य अत्यंत आकर्षक था।

"मेरा नाम वल्ली है। दुलहिन मेरी चचेरी बहन है। मैं रसोई में हाथ बंटाने उन के घर आई थी। मिठाइयाँ मैंने ही बनाईं। क्या आपको अच्छी लगीं?" ये शब्द कह कर सिर झुकाये वल्ली वहाँ से चली आई।

चार दिन बाद महेश ने बड़े भाई के घर खबर भेज दी कि वह वल्ली के साथ विवाह करना चाहता है; पर उस ने दहेज़ की बिलकुल मांग नहीं की थी।

यह खबर मिलते ही छोटा भाई और उस की पत्नी मानो होश ही खो बैठे। छोटे भाई की पत्नी इस बात पर पछताने लगी कि नाहक़ उसने महेश को क़िताब दे आने केलिए वल्ली को क्यों भेजा?

पर वल्ली के माता-पिता के आनंद की कोई सीमा न थी। विवाह अब सिर्फ़ दो

अब छोटे भाई की पत्नी ऐसा अभिनय कर रही थी कि मानो उस लड़की ने उसके भीतर प्रवेश कर लिया हो।

शादी के पंडाल में सभी लोग घबरा गये, नाना प्रकार से कहा-सुनी होने लगी। बेचारा बड़ा भाई भोला था। वह अपनी छोटी बहन को जान से अधिक प्यार करता था। वह यह कहते घर के भीतर जाने लगा—"बहन, मैं तुम्हें कभी नहीं भूलँगा। मैं अभी तुम्हारे वास्ते बढ़िया साड़ी खरीद लाता हूँ।"

इस बीच पंडाल में एक और मजे की बात हुई। तब तक अपने मित्रों से खुशी-खुशी बात करनेवाला दूल्हा पास में स्थित खेले के पेड़ को कंधे पर उठा कर भयंकर रूप से गर्जन करते इधर-उधर घूमने लगा।

"ओह! हनुमान ने दूल्हे के अन्दर प्रवेश किया है। अब कोई भूत-प्रेत व पिशाच यहाँ पर नहीं रह सकता।" सब लोग बोल उठे।

यह बात सुनते ही छोटे भाई की पत्नी गुप्त रूप से दांत पीसते लाचार हो पीछे की ओर टूट पड़ी। दूसरे ही क्षण दूल्हे के भीतर से भी हनुमान गायब हो गया।

शादी के दूसरे दिन बड़े भाई ने महेश से पूछा—"महेश, क्या जब-तब देवता तुम्हारे अन्दर प्रवेश करते हैं?"

महेश ने मुस्कुरा कर जवाब दिया—"मेरे भीतर न देवता ने प्रवेश किया है और न आपके छोटे भाई की पत्नी में पिशाचिनी के रूप में आप की छोटी बहन ने प्रवेश किया है। अगर उसे पिशाचिनी ही मान ले तो क्या दस साल की लड़की साड़ी माँग बैठेगी? इसलिए मैंने आप के छोटे भाई की पत्नी की कुबुद्धि को भांप कर ऐसा स्वांग रचा था।"

लोग बड़े भाई का अभिनंदन करने लगे कि उसे देवता प्रवेश करनेवाला दामाद मिल गया है, तो बड़े भाई और उसकी पत्नी ने यही कहा—"हाँ, हमें देवता जैसा दामाद जरूर मिल गया है।"

संगति का फल

एक दिन नारद ने भगवान विष्णु के पास जाकर पूछा–"सत्संगति का क्या फल होता है?"

भगवान ने कहा–"दण्डकारण्य में अभी एक कीड़े ने जन्म लिया है, जाकर उससे पूछ लो।"

नारद ने दण्डकारण्य में जाकर उस कीड़े को पहचान लिया, उसने वही सवाल कीड़े से पूछा। कीड़े ने सर उठा कर नारद की ओर देखा और दम तोड़ दिया।

नारद घबरा गया। भगवान विष्णु के पास जाकर सारी कहानी सुनाई और कहा–"भगवान, मेरी शंका का निवारण नहीं हुआ है।"

"कोई बात नहीं, अमुक गाँव में अमुक ब्राह्मण की गाय ने एक बछड़ा दिया है, तुम अपनी शंका उस के सामने रखो।" विष्णु ने उत्तर दिया।

नारद ने जाकर बछड़े को पहचान लिया, और उससे वही सवाल किया। बछड़े ने नारद की ओर दो पल देखा और उसने भी प्राण त्याग दिये।

नारद ने विष्णु के पास जाकर सारी कहानी सुनाई और कहा कि उस की शंका का निवारण नहीं हुआ है। विष्णु ने कहा–"दक्षिण देश में चोल राजा के यहाँ अभी एक लड़का पैदा हुआ है। तुम उसके पास जाकर पूछ लो।"

नारद ने चोल राजा के पुत्र के पास जाकर डरते-डरते यही सवाल किया।

"महात्मा, मैं ने कीड़े के रूप में पैदा होकर आप जैसे सत्पुरुष के दर्शन से बछड़े का जन्म पाया, फिर से आपके दर्शन पाकर इस बार राजकुमार के रूप में पैदा हुआ। सत्संगति के बारे में इससे अधिक मैं आपको क्या बता सकता हूँ?" राजकुमार ने उत्तर दिया।
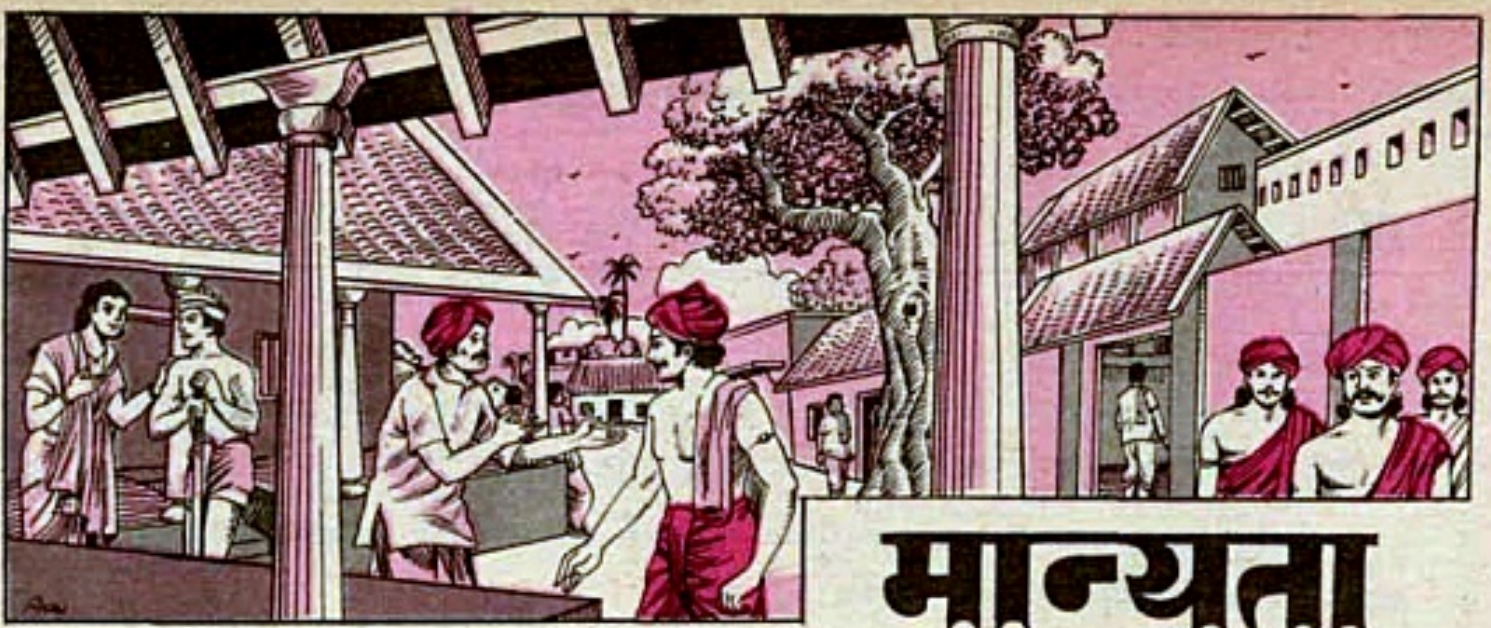
मान्यता

कर्पूर देश के राजा वसंतराय के मन में यह प्रबल इच्छा थी कि उसकी प्रजा उसे एक बड़े ही सम्राट के रूप में मान्यता दे और वह पुराण-पुरुषों की भांति शाश्वत कीर्ति प्राप्त करे। इस इच्छा की पूर्ति केलिए राजा ने अनेक दान-धर्म दिये और जनता के हित में कई योजनाएँ अमल कीं। जनता उस के संबंध में क्या सोचती है, यह जानने केलिए राजा अकसर अपना वेष बदल कर देशाटन किया करता था। जहाँ भी जाता, अपनी प्रशंसा सुन कर राजा फूला न समाता था।

इसी देशाटन के सिलसिले में एक गाँव में शिवनाथ नामक एक व्यक्ति ने राजा के प्रति अत्यंत उपेक्षा दिखाई, उस ने कहा था– "ये राजा कौन ऐसे बड़े हैं? आखिर उन्होंने हमारे गाँव के लिए कुछ किया ही क्या है?"

ये शब्द सुनने पर राजा का मन कचोट उठा। राजा ने तत्काल उस गाँव की अवश्यकताओं के संबंध में पता लगा कर जान लिया कि उस गाँव की जनता केलिए पानी की सुविधा नहीं है। सारे गांव के उपयोग के लिए एक ही तालाब था। वह बरसात के दिनों में पानी से भर जाता था, पर वर्षा न होने पर सूख जाता था।

राजा वसंतराय राजधानी को लौट आया, अपने मंत्रियों से सलाह लेकर उस गाँव के लिए एक नहर खुदवाई। नहर के आने से गाँव वालों की समस्या हल हो गई।

थोड़े दिन बाद राजा वसंतराय वेष बदल कर फिर से शिवनाथ से मिला। राजा ने सोचा कि इस बार शिवनाथ उस की प्रशंसा करेगा, पर शिवनाथ ने लापरवाही से यही जवाब दिया–"एक नहर खुदवाने से क्या हुआ? हमारे सामने

"वसुंधरा"

केवल एक पानी की ही समस्या तो नहीं है, और कई समस्याएँ जो हैं।"

राजा ने उस गाँव की हालत की सावधानी से जाँच की और आवागमन की सुविधा के लिए अनुकूल रास्ता न देख अच्छी सड़क़ बनवा दी, जिस से और गाँवों के साथ उस का सीधा संबंध जुड़ गया।

इस पर भी शिवनाथ ने राजा के कार्यों के प्रति असंतोष प्रकट किया। शिवनाथ की आलोचना के कारण राजा ने उस गाँव के लिए एक अच्छी पाठशाला, अस्पताल इत्यादि सुविधाएँ पहुँचा दीं। गाँव के लिए शहर की सारी सुविधाएँ प्राप्त हुईं। जनता ने राजा की जी खोल कर तारीफ़ की. मगर शिवनाथ ने तारीफ़ नहीं की।

आखिर राजा ने खीझ कर शिवनाथ से पूछा–"शिवनाथ, बात क्या है? सारा गाँव राजा की तारीफ़ करता है। तुम तो उनकी तारीफ़ क्यों नहीं करते?"

"जो लोग राजा के द्वारा लाभान्वित हुए हैं, वे लोग राजा की तारीफ़ करेंगे ही, लेकिन मैं किस वास्ते राजा की तारीफ़ करूँ?" शिवनाथ ने रोष में आकर कहा।

"जब राजा के कार्यों से सारे गाँववाले लाभ उठा पाये तो तुम अकेले क्यों नहीं उठा पाये?" राजा ने पूछा।

"बात साफ़ है; नहर के आने से उन लोगों की भलाई हुई जिन के यहाँ खेत हैं। सड़क के बनने से व्यापारियों का लाभ हुआ, पर मुझे क्या फ़ायदा रहा?
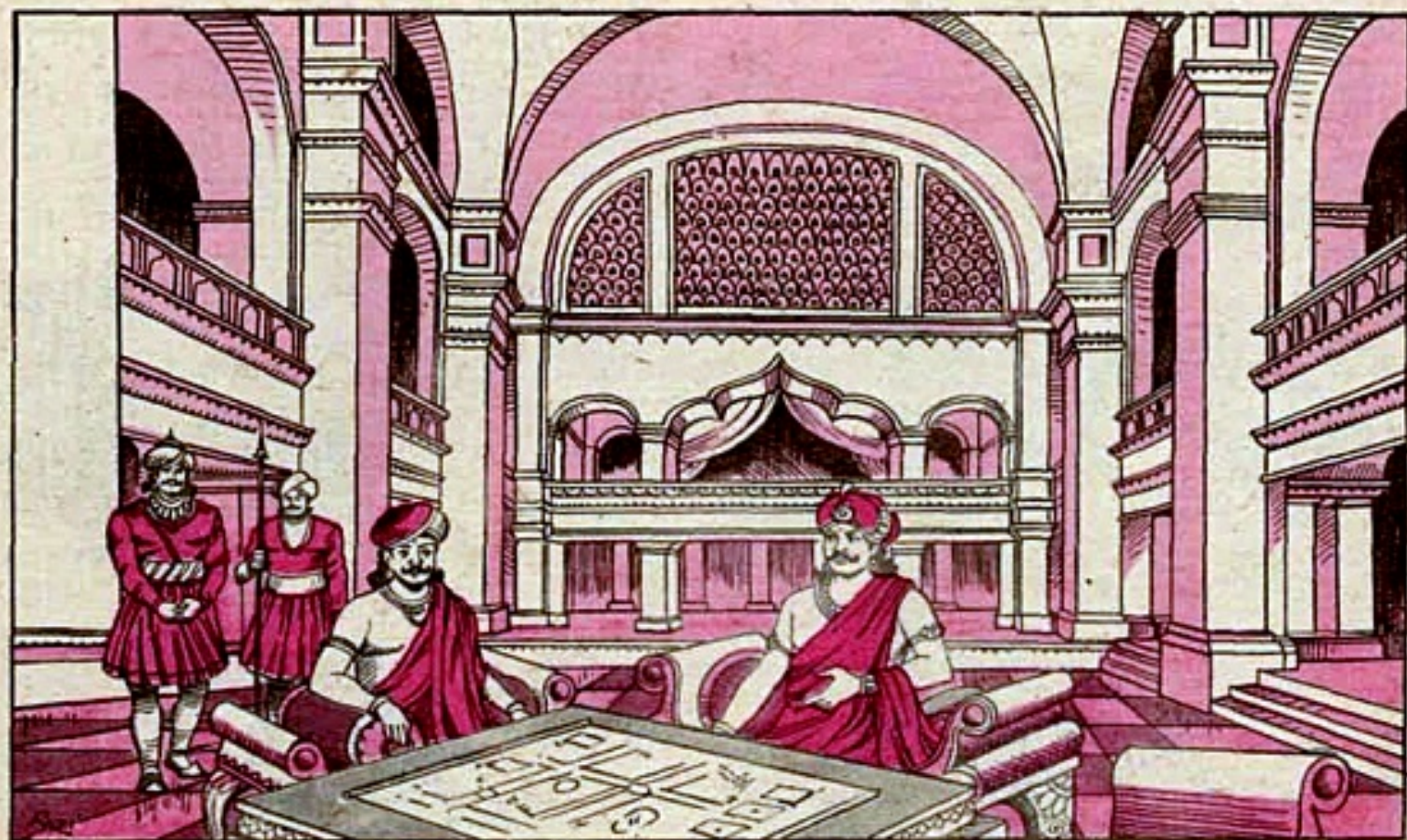
मेरे घर पढनेवाले बच्चे नहीं हैं। अस्पताल खुल गया, पर मैं आज तक बीमार न पड़ा। शहर की भांति मनोरंजन के साधन भी आ गये, लेकिन उन्हें देख आनंद उठाने के लिए मेरे पास धन ही कहाँ है?" शिवनाथ ने स्पष्ट कह दिया।

इस पर राजा ने शिवानाथ की हालत जान ली। उस के बूढ़े होने से लड़कों ने उसकी उपेक्षा की थी। यह जान कर राजा ने शिवनाथ के रहने के लिए एक छोटा-सा मकान बनवा लिया और आराम से दिन काटने केलिए धन का भी इंतज़ाम किया। इसके बाद राजा से मुलाक़ात होने पर शिवनाथ ने राजा की भूरि भूरि प्रशंसा की।

इसी क्रम से देशाटन करते समय एक दूसरे गाँव में राजा से हरिनाथ की मुलाक़ात हुई। उसने कहा—"हमारे राजा ने आखिर मेरे गाँव के लिए क्या किया है? लोग बेवकूफ हैं, इसलिए उनकी तारीफ़ करते नहीं थकते।" इस पर राजा ने गाँव की हालत जानने के बदले हरिनाथ का हाल जान लिया और उसके सुखपूर्वक जीने के लिए आवश्यक सारी सुविधाएँ करवा दीं, फिर क्या था, हरिनाथ ने भी राजा की हद से ज्यादा तारीफ़ की।

इस पर राजा वसंतराय की आँखें खुल गईं। राजा ने यह जान लिया कि अनेक महत्व पूर्ण कार्य करने पर भी उस व्यक्ति को लोग सही मान्यता नहीं देते, पर विशेष रूप से व्यक्तिगत लाभ होने पर ही लोग उस व्यक्ति को मान्यता देते हैं। अगर देश के प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा मान्यता प्राप्त करनी है तो उसे प्रत्येक व्यक्ति के निजी लाभ का कोई कार्य करना होगा। पर यह संभव नहीं है। इसलिए केवल मान्यता प्राप्त करने के लिए नहीं, अधिकांश लोगों के लाभ के हेतु कार्यक्रम अमल करने हैं। यह सत्य जानने के बाद राजा ने ऐसे ही कार्य किये। इस पर उनके जीवन-काल में भले ही सारी जनता ने उन्हें मान्यता न दी हो, पर कर्पूर वसंत राय का नाम शाश्वत रूप से लोकप्रिय हो गया।

बेकार की शिक्षा

जगन नामक एक चोर था। वह जिंदगी भर अकेले चोरियाँ करता रहा, आखिर जब बूढ़ा हो गया, तब अपनी बेटी के साथ एक शहर में जाकर ईमानदारी से अपने दिन बिताने लगा। कोई साथी मिले तो वह अब भी चोरियाँ कर सकता था, पर साथी को रखना भी ख़तरे से खाली न था। इसलिए उसने साथी की खोज नहीं की।

एक बार जगन के घर के सामने करनटों ने अपनी करामतें दिखाईं। उन में से एक युवक ने जगन को अपनी ओर आकृष्ट किया। ऊंचाई पर से कूदने, छलांगें मारने में वह बेजोड़ था, देखने में भी वह सुंदर था।

जगन को लगा कि यदि वह अपनी बेटी की शादी उस युवक के साथ कर दे तो वह कई सालों तक बेरोकटोक चोरियाँ कर सकता है। उस युवक ने जगन की बेटी के साथ शादी करने व उसी के घर जमाई दामाद बनने को मान लिया।

एक दिन रात को जगन अपने दामाद को साथ ले धनी के घर पहुँचा और बोला–"तुम इस चहर दीवारी को लांघ कर अन्दर से किवाड़ खोल दो।"

"ससुरजी! क्या यह दीवार लांघना खेल-तमाशा समझते हो? इस केलिए लंबा बाँस चाहिए। मेरे बापू को डफली बजानी है। चिल्लाहटें और सीटियाँ बजे, तो मेरे भीतर उत्साह पैदा होगा, वरना इस दीवार को फांदना ना मुमक़िन है।" दामाद ने जवाब दिया।
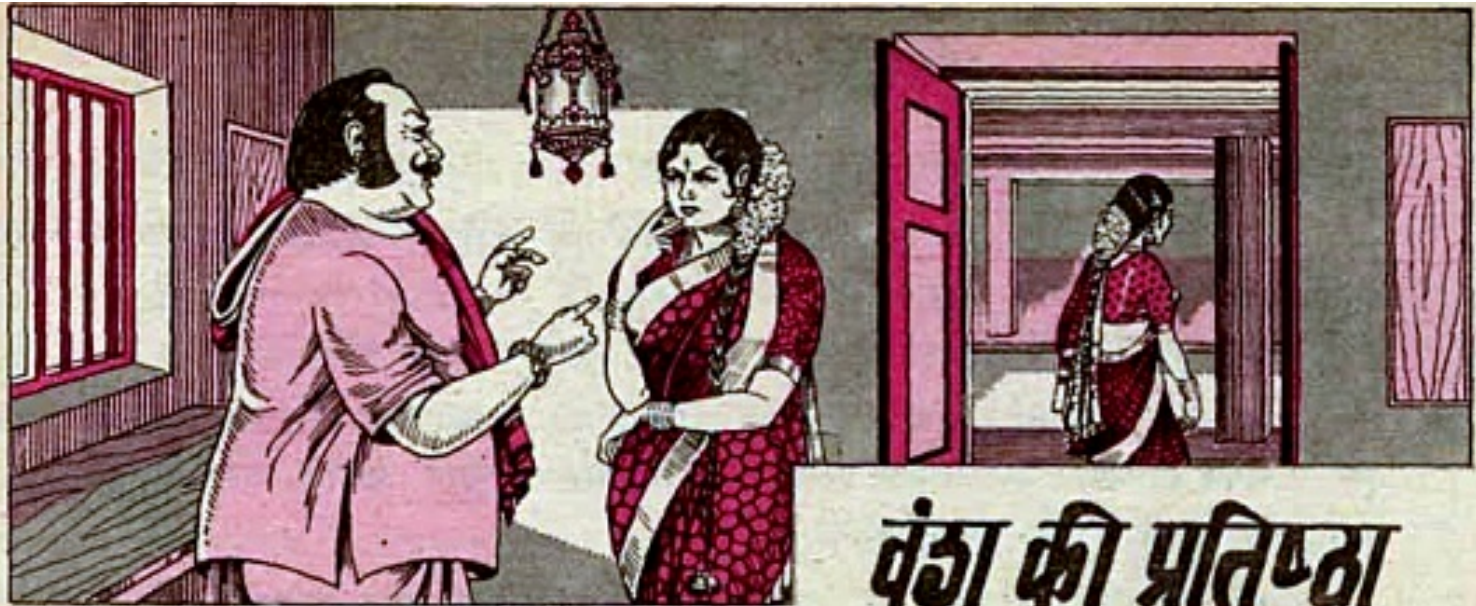
वंश की प्रतिष्ठा

एक जमीन्दार के तीन पुत्र थे। तीनों के विवाह भी हो चुके थे। तीनों की बहुएँ गृहस्थी के कार्यों में हाथ बटाती थीं; पर जमीन्दार अव्वल दर्जे का कंजूस था। वह अपने पुत्रों के हाथ एक भी कौडी पड़ने न देता था। इसलिए वे धन कमाने केलिए अन्य प्रकार के धंधों में लग गये थे। जमीन्दार का विचार था कि उस के पुत्रों का बंटवारा वंश की प्रतिष्ठा केलिए कलंक की बात होगी। इसलिए सभी भाई संयुक्त परिवार में रहने लगे।

जमीन्दार अपनी तबीयत का ख्याल रखते हुए स्वयं प्रकृति चिकित्सा किया करता था। वह प्रति दिन नदी में नहाने जाता, सारे बदन में मिटटी मल लेता, घड़ी भर बाद नहा कर घर लौटता था।

जमीन्दार का सारा धन एक अलग कमरे में तिजोरी के अन्दर रखा हुआ था। उस की चाभियाँ जमिन्दार की कमर में खोंसी रहती थीं। नहाने केलिए जाते वक़्त वह सारी चाभियाँ अपने दूसरे बेटे के हाथ दिया करता था। बाक़ी दोनों पुत्रों पर उस का विश्वास न था।

एक दिन जब वह नहाने जा रहा था, तब एक भी पुत्र घर पर न था। छोटी बहू पर इधर थोडे दिनों से उस का विश्वास जमता जा रहा था। इसलिए उस ने चाभियों का गुच्छा छोटी बहू के हाथ देकर समझाया कि उस के नहा कर लौटने तक उसे सुरक्षित रखे।

थोड़ी दूर जाने पर जमीन्दार को लगा कि छोटी बहू पर इतना विश्वास करना भी शायद उचित नहीं है, यों सोच कर वह लौट आया, बड़ी बहू को गुप्त रूप से समझाया कि वह छोटी बहू पर निगरानी रखे रहे, तब फिर नहाने चल पड़ा। इस बार भी

राम सहाय पांडे

उस के मन में यह शंका हुई कि दोनों बहुऐं मिल कर कहीं धन हड़प न ले, वह पुनः लौट आया, दूसरी बहू को बाक़ी दोनों बहुओं पर निगरानी रखने केलिए समझा कर निश्चिंत नहाने चला गया।

छोटी बहू के हाथ में जब से चाभियों का गुच्छा आ गया, तब से उस के मन में तिजोरी खोलने का कुतूहल बढ़ता गया। लेकिन जब भी वह उस कमरे की ओर जाती, बड़ी बहू उस पर निगरानी रखने लगी। इसी प्रकार दूसरी बहू छोटी व बड़ी बहुओं की गति-विधियों पर निगरानी रखते उन्हें स्पष्ट मालूम हुआ।

आखिर जब तीनों ने परस्पर बात की, तब उन्हें अपने ससुर की चाल का पता लग गया। तीनों ने मिल कर तिजोरी खोल दी, अपने लिए आवश्यक धन लेकर पुनः उसे बंद किया। उन के घर के समीप में ही कपड़े की एक दूकान थी। तीनों ने दूकान में जाकर तीन साड़ियाँ खरीद लीं; नई साड़ियाँ पहन कर अपने ससुर के लौटने तक वे उत्साह पूर्वक अपने अपने कामों में लग गईं।

जमीन्दार ने घर लौट कर देखा कि उस की तीनों बहुऐं नई साड़ियाँ पहने हुए हैं, इसे देखने पर उस का कलेजा धड़क उठा। फिर भी उस ने प्रकट रूप में कोई विशेष जिज्ञासा व्यक्त किये बिना दूसरी बहू से पूछा—"बेटी, तुम तीनों को नई साड़ियाँ कहाँ से आ गईं?"
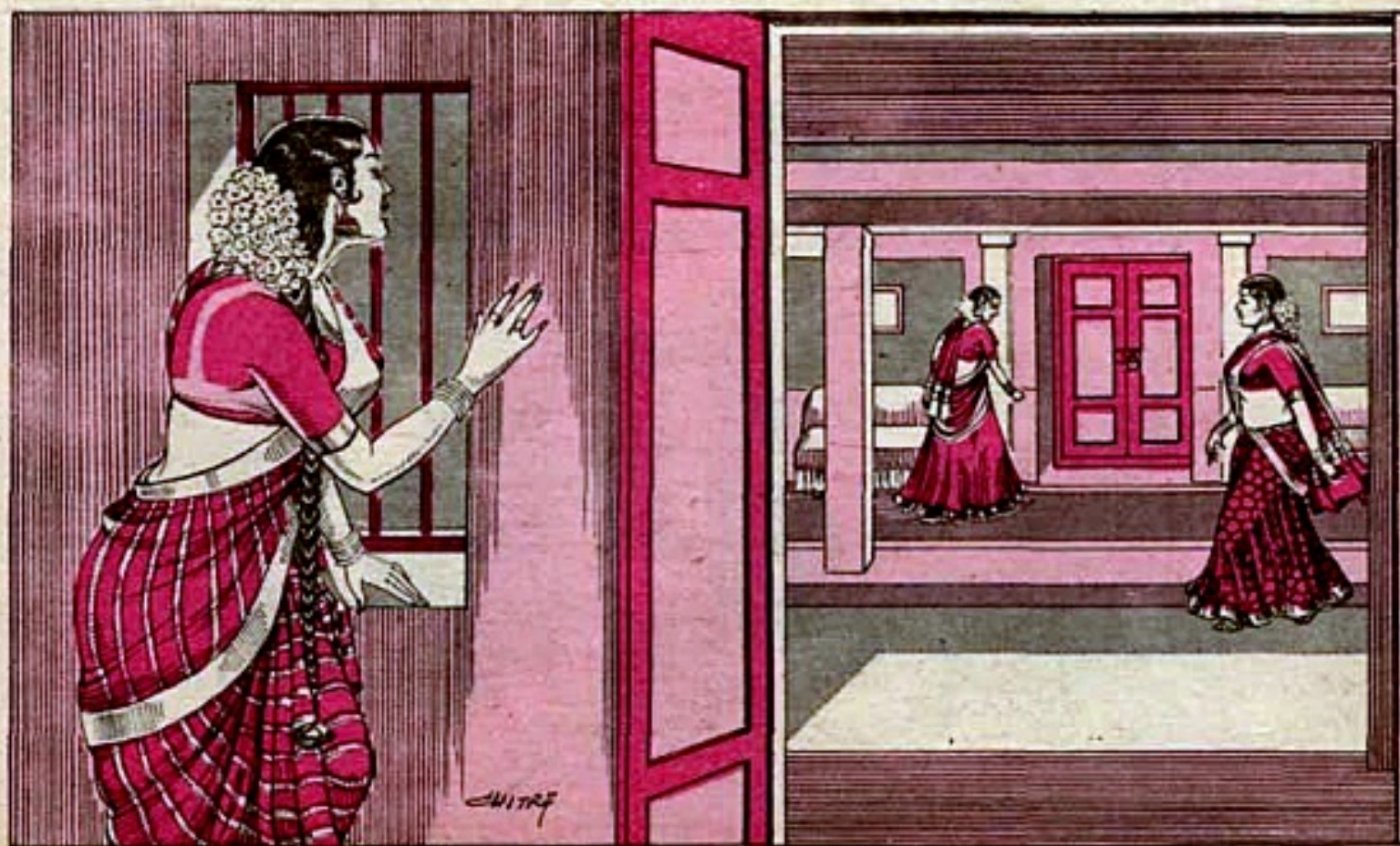
दूसरी बहू ने चाभियों का गुच्छा अपने ससुर के हाथ देते हुए कहा–"आप के नहाने जाते ही एक ज्योतिषी हमारे घर आया,वह यह कह कर चला गया कि मेरे समीप में ही संपदा है, वह शीघ्र मेरी अपनी हो जाएगी। उस के जाते ही हमारे जान-पहचान का कपड़े का व्यापारी घर आया, उसने हम तीनों की प्रशंसा करके तीन साड़ियाँ देकर शीघ्र पहनने का अनुरोध किया। हमने साड़ियों का दाम पूछा, तो उसने यही जवाब दिया–"क्या मैं आप के ससुर के वंश की प्रतिष्ठा की बात नहीं जानता? मैं अगर मर कर स्वर्ग में भी चला जाऊँगा तो, वे मुझे वापस बुला कर साड़ियों का दाम चुकायेंगे, एक कौड़ी भी कम न करेंगे।" इतने में आप के कमरे के भीतर से किसीने दर्वाजे पर दस्तक दी। साथ ही हमें घुंघुरों की आवाज़ सुनाई दी। इस पर कपड़े के व्यापारी ने कहा–"बेटियो, धनलक्ष्मी दर्वाजे पर दस्तक दे कर कर्ज चुकाने की बात कह रही है।" इस पर हम तीनों डर गईं। तीनों ने मिल कर आप का कमरा खोल दिया। कंगनों वाले एक हाथ ने किवाड़ों के दराज में से हमारे हाथ रुपये रख दिये। हमने कपड़े के व्यापारी का क़र्ज चुका दिया।"

तब तक जमीन्दार के तीनों पुत्र घर लौट आये। जमीन्दार ने क्रोध में आकर पूछा– "वह कमबख्त कपड़े का व्यापारी कहाँ?"

"वह हमारे वंश की प्रतिष्ठा की तारीफ़ करते उसी वक़्त चला गया।" बड़ी बहू ने जवाब दिया।

इस पर जमीन्दार यह सोच कर मौन रहा कि यदि वह बहुओं को डांटेगा तो बेटे नाराज़ हो जायेंगे और बंटवारा हो जाने पर वंश की प्रतिष्ठा धूल में मिल जाएगी।

पर जमीन्दार ने सपने में भी न सोचा था कि उस दिन उस के तीनों बेटे आपस में तै करके ही सवेरे-सवेरे घर से चल पड़े थे। यह योजना सब बेटे और बहुओं ने मिलकर बनाई थी। पर इस प्रकार बहुओं की कई दिनों की इच्छा पूरी हुई।

इलाज का रहस्य

कीर्तिपुर नामक गाँव में सुंदराचार्य नामक एक वैद्य था। वास्तव में वह वैद्य न था, एक मशहूर वैद्य का पुत्र था। उस के पिता अथर्वणाचार्य ने न केवल अद्‌भुत चिकित्साएँ कीं, बल्कि अनेक रसायन, औषधियाँ, भस्म, लेह्य, आसवारिष्ट इत्यादि तैयार करके छोड़ गया था। लोग यह सोच कर सुंदराचार्य के पास इलाज कराने आने लगे कि सुंदराचार्य एक प्रतिष्ठित वैद्य के पुत्र हैं, दवाएँ तो उनके पिता के द्वारा तैयार की गई हैं, इसलिए उन दवाइयों से वे अच्छा इलाज कर सकते हैं।

उन्हीं दिनों में रामशर्मा नामक एक युवक ने वैद्य विद्या में प्रशिक्षण प्राप्त किया, वह किसी एक गाँव में अपना स्थिर निवास बनाने के ख्याल से अनेक गाँव घूमते आखिर कीर्तिपुर में आ पहुँचा। एक दिन गाँव के मुखिये की पुत्री प्रसव के समय ज्वर से पीड़ित हो गई। इसलिए उस का इलाज करने केलिए सुंदराचार्य को बुलाया गया। उस ने रोगी की नाड़ी देख कोई दवा दी।

इस बीच रोगी के शरीर से एक दम पसीना छूटा और देखते-देखते उसकी देह ठण्डी हो गई। इसे देख मुखिये का नौकर दौड़कर रामशर्मा को बुला लाया। रामशर्मा ने बीमारी की हालत जानकर रोगी की नाड़ी की जाँच की, कोई लेह्य बना कर शहद में मिलाया और रोगी की जीभ पर रख कर चटवाया; कुछ ही क्षणों में में रोगी ने आँखें खोलीं।

उस दिन से रामशर्मा का नाम सारे गाँव में फैल गया। इस पर सुंदराचार्य के मन में रामशर्मा के प्रति ईर्ष्या पैदा हुई। उसने रामशर्मा से बदला लेने केलिए अपने मित्र करटकाचार्य की सलाह माँगी।

विमला सहानी

अपने मित्र की सलाह के अनुसार सुंदराचार्य ने जानकीदास नामक एक व्यक्ति को धन का लोभ दिखा कर अपनी युक्ति बताई। जानकीदास दो और आदमियों को साथ लेकर सीधे रामशर्मा के घर पहुँचा। उस वक़्त गाँव का मुखिया रामशर्मा से बात कर रहा था। जानकीदास ने रामशर्मा से पेट के दर्द की दवा माँगी। रामशर्मा ने रोगी की जाँच करके जान लिया कि पेट उफरा नहीं है, इसलिए पेट दर्द का वास्तविक कारण बदहजमी होगा, यों सोचकर उसने रोगी को थोड़ा-सा लवण भास्कर चूर्ण खाने को दिया।

जानकीदास ने चूर्ण निगल डाला, दूसरे ही क्षण चीखकर नीचे गिर पड़ा। इसे देख जानकीदास के साथ आये हुए दोनों लोग चिल्ला उठे—"बाप रे बाप, इस वैद्य ने जानकीदास को मार डाला है।"

रामशर्मा ने जानकीदास की नाड़ी की जाँच करके समझ लिया कि यह कोई स्वांग रच रहा है, इसलिए उसे अच्छा सबक़ सिखलाना चाहिए, बोला—"महाशय, यह बड़ा ही खतरनाक पेट दर्द है। इसे कालकूट विष ही ठीक कर सकता है। इस दवा को जानकीदास के गले में डालते ही पेट दर्द हो तो झट दूर होगा और यह उठ बैठेगा, नहीं तो इस के मरने पर मेरी जिम्मेदारी न होगी। क्यों कि इसे इस वक़्त दवा न भी दे तो भी यह मर जाएगा।" रामशर्मा ने गाँव के मुखिये को समझाया।

इस के बाद रामशर्मा भीतर से एक गिलास में कोई चीज़ ले आया और जानकीदास के साथियों से बोला—"सुनो, तुम दोनों जानकीदास का मुँह खोल दो।"

"सरकार, मुझे बचाओ।" यों चिल्लाते जानकीदास उठ बैठा।

इस के बाद उसने सुंदराचार्य के षड्यंत्र का वृत्तांत सबके सामने सुनाया। फिर क्या था, सुंदराचार्य उसी वक़्त उस गाँव को छोड़ कर भाग गया। अथर्वणाचार्य की दवाएँ रामशर्मा और गाँव वालों को काम देने लगीं।
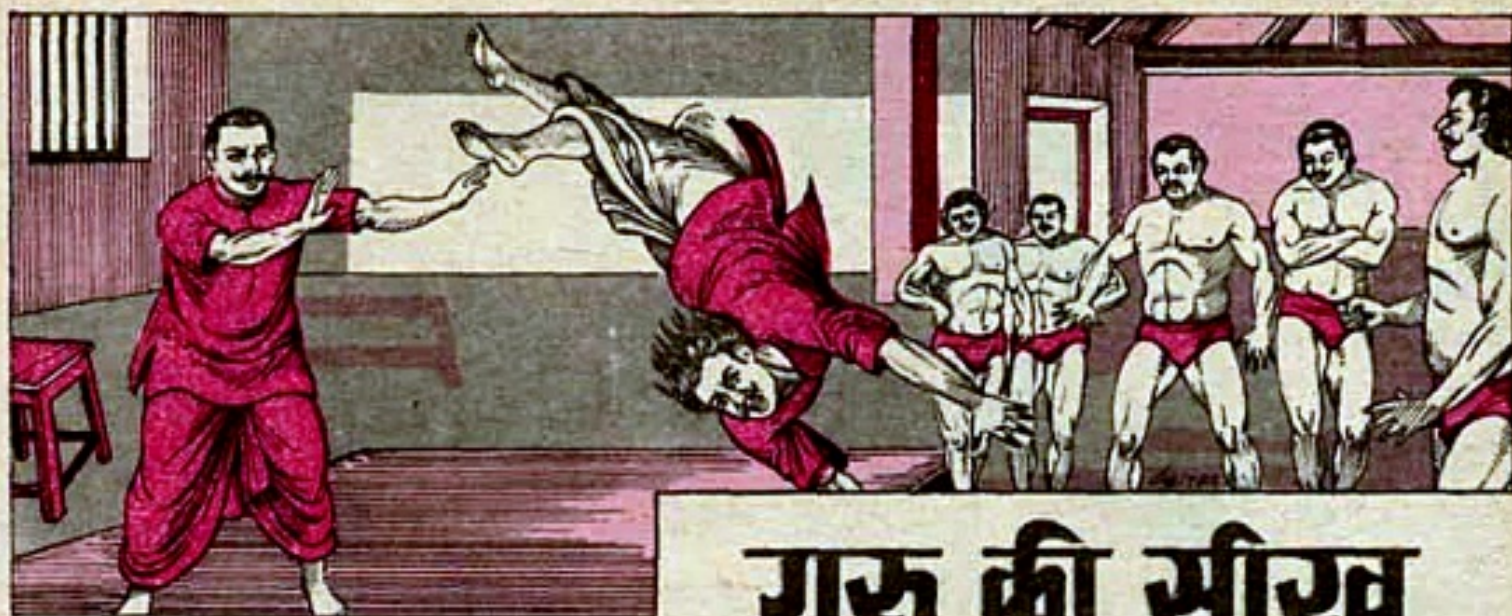
गुरु की सीख

प्राचीन काल में चंपावती नगर में पर्वत मल्ल नामक एक मल्ल योद्धा युवकों को मल्लविद्या में प्रशिक्षण दिया करता था। उसके शिष्यों में भार्गव और शूरवर्मा बहुत ही प्रसिद्ध थे।

एक दिन दीर्घनाभ नामक एक व्यक्ति ने आकर पर्वत मल्ल को चुनौती दी—"पर्वत मल्ल, तुम मल्लविद्या की चार-पांच रीतियाँ अपने शिष्यों को सिखा कर उन्हें सर्वश्रेष्ठ मल्लयोद्धा मानते हो? तुम्हारी विद्या को मैं तभी सही मानूंगा जब कि तुम्हारे शिष्यों में से कोई मुझे पराजित कर सकें; समझें!"

ये बातें सुनने पर भार्गव का खून खौल उठा। उसने दीर्घनाभ की कमर पकड़ कर चक्र की भांति घुमाया और नीचे पटक दिया। दीर्घनाभ को लगा कि उसकी कमर टूट गई है। वह उठ खड़ा हुआ, धूल झाड़ कर मन ही मन कोसते वहाँ से चल पड़ा। मल्लयोद्धाओं की जिंदगी में ऐसी घटनाएँ अकसर हुआ करती हैं, इस कारण किसी ने इस घटना पर कोई विशेष ध्यान न दिया।

चार-पांच साल बीत गये। भार्गव और शूर वर्मा अपना प्रशिक्षण समाप्त कर जीविका की खोज में चल पड़े। मगध देश में पहुँचने पर उन्हें खबर मिली कि मगध राजा के दरबार में एक दरबारी मल्ल योद्धा ज़रूर है, पर वह नौकरी स्थाई नहीं है। उस योद्धा को पराजित करने वाले को वह पद मिल जाता है। इस कारण भार्गव और शूर वर्मा ने उस पद की प्रतियोगिता में भाग लेना चाहा। मगर जो जीतेगा, उसी को वह पद प्राप्त होगा। दूसरे को वह मौक़ा न मिलेगा। इसलिए शूर वर्मा ने यह मौक़ा भार्गव को दिया।

राजनाथ वर्मा

भार्गव तथा दरबारी मल्ल के बीच प्रतियोगिता का प्रबंध हुआ। दोनों के बीच बड़ी देर तक द्वन्द्व युद्ध चला। दरबारी मल्ल के साथ इतनी देर तक लड़ने वाला आज तक कोई आगे न आया था। इसे देख राजा भार्गव की प्रतिभा पर चकित हुआ। वास्तव में भार्गव ने अपने गुरु से जो जो रीतियाँ सीखी थीं, इस द्वन्द्व युद्ध में उन सब का प्रयोग किया। मगर दरबारी मल्लयोद्धा उद्दंड था। उसने भार्गव की सभी रीतियों की न केवल प्रतिक्रियाएँ कीं, बल्कि उसे पछाड़ भी दिया।

इस के बाद शूरवर्मा ने दूसरे दिन दरबारी मल्ल के साथ लड़ने का इंतज़ाम कराया और वह भार्गव के साथ चला गया। दूसरे दिन ज्यों ही दरबारी मल्ल ने गोदा में उतर कर ताल टोंका, त्यों ही शूरवर्मा ने हठात उसे अपने हाथों पर ऊपर उठा कर गोदा से बाहर दस फुट की दूर फेंक दिया।

दरबारी मल्ल चित हो गया। अब वह लड़ नहीं सकता था। इसलिए दरबारी मल्ल का पद शूरवर्मा को प्राप्त हुआ।

भार्गव शूरवर्मा की युक्ति पर आश्चर्य में आ गया। उसने पूछा—"दोस्त, इससे अब साफ़ मालूम हुआ कि हमारे गुरुजी ने कुछ ऐसी रीतियाँ तुम्हें सिखाईं जिन्हें मुझे सिखाई नहीं हैं। यह बात सही है न? तुमने जिस विधि से दरबारी मल्ल को हराया, गुरुजी ने मुझे वह रीति नहीं सिखाई है। मैंने नहीं सोचा था कि गुरु भी पक्षपात करते हैं।"

शूरवर्मा ने भार्गव को डांटते हुए कहा—"भार्गव, यह रीति गुरुजी ने मुझे नहीं सिखाई है। इसे मैं ने एक दूसरे योद्धा से सीखी है।" इन शब्दों के साथ उस ने उस योद्धा का हुलिया बताया।

शूरवर्मा की बातों पर भार्गव विश्वास न कर पाया, पर असली बात का पता लगाने केलिए वह उस योद्धा के नगर में पहुँचा। योद्धा ने भार्गव के मुंह से सारी बातें

सुन कर कहा–"यह पद्धति मेरी सृष्टि नहीं है। यहाँ से थोड़ी दूर पर स्थित प्रतिष्ठानपुर में एक बार एक कसाई के साथ मेरी स्पर्धा हुई। उसने इस पद्धति के द्वारा मुझे हराया। उस पद्धति का अच्छी तरह से अभ्यास करके मैं ने उसे तुम्हारे दोस्त को सिखलाया।"

भार्गव प्रतिष्ठानपुर पहुँचा। मल्लयोद्धा के कहे अनुसार कसाई की दूकान का पता लगाया। वहाँ पर मांस बेचनेवाले दीर्घनाभ को देख भार्गव चकित रह गया।

दीर्घनाभ भी भार्गव को देख विस्मय में आया और उसने भार्गव के आगमन का कारण पूछा। भार्गव ने सारा वृत्तांत सुना कर अपनी शंका व्यक्त की।

दीर्घनाभ ठठाकर हंस पड़ा और बोला– "दोस्त, यह विधि तुमने मुझ पर प्रयोग की थी। क्या भूल गये? जब मैं ने तुम्हारे गुरुजी के सामने चुनौती दी तब तुमने हठात् मुझे ऊपर उठा कर फेंक दिया था। वह रीति मुझे बहुत ही अच्छी लगी। मैं ने उसे एक अच्छी रीति के रूप में विकसित किया।"

"मैं दरबारी मल्ल के साथ बड़ी देर तक लड़ा, लेकिन मेरे ही समान योद्धा शूरवर्मा ने पल भर में उसे कैसे हराया है? यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही है।" भार्गव ने पूछा।

"इस में आश्चर्य की बात ही क्या है? सच्चा मल्ल योद्धा यही करता है। शूरवर्मा ने पहले तुम्हें मौक़ा देकर शत्रु की ताक़त और निपुणता का अंदाज़ा लगाया। उसे स्पष्ट मालूम हुआ कि तुम्हारे गुरु ने जो रीतियाँ सिखाई हैं, वे उस पर काम न देंगी। इसलिए प्रत्यर्थी को मौक़ा न देकर पहले वार में ही उसे चित कर दिया।" दीर्घनाभ ने समझाया।

भार्गव ने भाँप लिया कि किसी भी दृष्टि से देखा जाय, शूरवर्मा उससे कहीं अधिक अक़्लमंद है। इसलिए उसे दरबारी मल्ल का पद प्राप्त होने पर वह अत्यंत खुश हुआ।

गुरु दक्षिणा

उज्जैन में मानसिंह नामक एक डाकू रहा करता था। राजा ने उसे बन्दी बनाने के बहुत सारे प्रयत्न किये और आखिर निराश हो उसे पकड़ा देने वाले को दस हजार मुद्राएँ पुरस्कार देने की घोषणा की; पर कोई भी पुरस्कार जीत न जाया।

एक बार मानसिंह एक धनी के घर चोरी करने गया, वह ऊपरी मंजिल तक पहुँच ही पाया था कि नौकरों ने देखा और उसे घेर लिया। मानसिंह एक आम के पेड़ पर कूद पड़ा और पड़ोसी घर के अहाते में होकर चंपत हो गया।

वास्तव में मानसिंह पेड़ पर से गिर कर घायल हो गया और वह उठ नहीं पाया। वह जिस घर के अहाते में गिरा था, वह घर रामशास्त्री नामक एक वैद्य का था। मानसिंह रेंगता गया, बारामदे में दवाइयाँ तैयार करने वाले रामशास्त्री से इलाज करने की प्रार्थना की, रामशास्त्री ने मानसिंह के घावों की जांच की और घर के अन्दर चला गया। इस के बाद लालटेन लेकर पिछवाड़े की राह में जाने वाले रामशास्त्री से उस की पत्नी ने पूछा—"अजी, सुनो, इस वक़्त कहाँ जा रहे हो?"

रामशास्त्री ने धीमी आवाज़ में उत्तर दिया—"अरी, हमारी क़िस्मत खुल गई है। वह घायल व्यक्ति डाकू मानसिंह है। उसे सिपाहियों के हाथ पकड़ा दे तो राजा हमें दस हज़ार मुद्राओं का पुरस्कार देंगे। मेरे लौटने तक तुम चोर पर निगरानी रखे रहो।" यों समझाकर रामशास्त्री चला गया।

वैद्य रामशास्त्री को बड़ी देर तक लौटते न देख मानसिंह के मन में संदेह पैदा हुआ। उसने वैद्य की पत्नी से पूछा—"तुम्हारा पति कहाँ गया है? जल्दी बता दो, वरना देखो, मेरे हाथ में चाकू है।"

शिव कुमार गुप्त

रामशास्त्री की पत्नी डर गई और उसने सच्ची बात बता दी। मानसिंह ने युक्ति से काम लेना चाहा। उस ने कहा– "माई, मुझे राजा के हाथ सौंप दोगी तो तुम्हें दस हज़ार मुद्राएँ मिलेंगी, मैं तुम्हें एक लाख मुद्राएँ दूंगा। इसलिए सिपाहियों के आने के पहले मुझे कहीं छिपा रखो।"

रामशास्त्री की पत्नी के मन में धन का लोभ पैदा हुआ। उस ने मानसिंह को धान की कोठी में छिया दिया, अपने चेहरे पर लाल रंग पोत कर रोते बैठ गई। सिपाहियों को साथ ले रामशास्त्री आ पहुँचा, तब उस औरत ने रोते हुए कहा–"अजी, वह दुष्ट मुझे पीट कर कहीं भाग गया है।"

सिपाही नाराज़ होकर वहाँ से चले गये। उन के जाने पर मानसिंह बाहर निकला। उसे देख रामशास्त्री चौंक पड़ा। पत्नी ने सारी बातें उसे समझाईं। रामशास्त्री ने मानसिंह के घावों पर मरहम पट्टी बांधते हुए पूछा–"हमारे हाथ धन कैसे लगेगा?"

मानसिंह ने एक तमगा रामशास्त्री के हाथ देकर समझाया–"आप इसे ले जाकर मेरे साथियों को दिखला दीजिए। वे आप को एक लाख मुद्राएँ दे देंगे। आप के लौटने के बाद ही मुझे यहाँ से भिजवा दीजिए।" इन शब्दों के साथ उसने वैद्य को अपने निवास का हुलिया बताया।

रामशास्त्री संतुष्ट हो चोरों के अडडे पर गया। उसे एक लाख मुद्राएँ मिल गईं। पर चोर उस की आँख बचा कर उस के पीछे आ धमके, रामशास्त्री को रस्सियों से बांध दिया, एक लाख मुद्राएँ छीन लीं और अपने नेता को छुड़ा कर भाग गये। साथ ही उस के लड़के को अपने साथ ले जाते हुए बोले–"तुम दस हज़ार मुद्राएँ देकर अपने लड़के को छुड़वा लो।"

रामशास्त्री रो पड़ा। उसने अपना हाल अपने शिष्य शंभुदास को सुनाया। उस ने रामशास्त्री को एक युक्ति बताई। दो दिन बाद मानसिंह ने रामशास्त्री के घर आकर पूछा–"तुमने क्या निर्णय किया है?"

"भाई, मैं ने अभी थोड़ी देर पहले ही तो दस हज़ार मुद्राएँ तुम्हें दी हैं न? तुमने दस हज़ार मुद्राएँ उजड़े शिवालय के पास ले आने को नहीं कहा था? फिर से मेरी जान क्यों लेते हो?" रामशास्त्री ने कहा।

"झूठ मत बोलो। मैं ने तुम से कब लिया था?" मानसिंह ने गरम होकर पूछा।

"मैं क्या बताऊँ? शायद तुम्हारा कोई साथी तुम्हारा वेष धर कर आया हो?" रामशास्त्री ने कहा।

मानसिंह के मन में शंका पैदा हुई। वह सोच कर बोला-"कल आधी रात को मैं शिवालय के पास आ जाऊँगा। तुम्हारी बात झूठ साबित हुई तो मैं तुम्हें मार डालूंगा।"

दूसरे दिन आधी रात के वक़्त रामशास्त्री शिवालय के पास जा बैठा। थोड़ी देर बाद एक नक़ाबधारी व्यक्ति ने आकर पूछा-" क्या तुम धन ले आये हो?"

"कल तुम्हारे जाने के बाद एक व्यक्ति अपने को असली मानसिंह बताते आया। मैं तब तक तुम्हें धन न दूंगा, जब तक मुझे यह विश्वास न हो जाय कि असली मानसिंह कौन है?" रामशास्त्री ने कहा।

"मैं ही असली मानसिंह हूँ।" ये शब्द कहते नक़ाबधारी ने रामशास्त्री के हाथ से धन की थैली खींच ली।

इस घटना को ओट में छिपे देखने वाला मानसिंह नक़ाबधारी पर हमला कर बैठा। नक़ाबधारी पहले से ही तैयार था। उस ने कसकर मानसिंह को पकड़ लिया। रामशास्त्री ने मानसिंह को बांध दिया।

शंभुदास ने नक़ाब हटा कर कहा-"गुरूजी, चोर पकड़ा गया हैं।"

इस के बाद दोनों ने मिल कर मानसिंह को सिपाहियों के हाथ पकड़ा दिया। उसके अनुचर भी पकड़े गये। रामशास्त्री के लड़के को घर लाया गया। फिर उसे दस हज़ार मुद्राओं का पुरस्कार भी मिला।

रामशास्त्री ने शंभुदास से कहा-" शंभु, यह धन तुम्हारा ही है, ले लो।"

"गुरुजी, गुरु दक्षिणा के रूप में आप ही ले लीजिए।" शंभुदास ने कहा।

मांत्रिक और तोता

कौशिकपुर के राजा वीरसेन की पट्ट महिषी शचीदेवी का एक बार लाख रुपये क़ीमती हीरों का हार चोरी गया। अंत:पुर में कुल मिला कर पचास से ज्यादा नौकर थे।

राजा ने अंत:पुर के सभी नौकरों को बुला भेजा और सबको डांट कर कहा– "तुम लोगों में से किसी ने हीरों के हार की चोरी की है। यदि उसे चुपचाप लाकर कोई मेरे हाथ देगा तो मैं उसे सजा न दूंगा।"

एक सप्ताह बीत गया, पर किसीने हार लाकर न दिया और न चोर का ही पता लगा। एक दिन राजा का दरबार लगा हुआ था, तभी एक साधू राजा के दर्शन करने आया; उसके साथ एक तोता भी था।

साधू ने दरबार में प्रवेश करते ही कहा– "महाराज, मैं एक मांत्रिक हूँ। मैं अपनी मंत्र-शक्ति के बल पर इस तोते के मुँह से हीरों का हार चुराने वाले चोर का नाम कहला सकता हूँ। आप चाहे तो इसकी परीक्षा ले सकते हैं।"

ये बातें सुनने पर दरबार में एक दम कोलाहल मच गया। राजा ने सब को मौन रहने का आदेश देकर साधू से पूछा– "साधू महाराज, चोर का पता बताने के पहले आप अपनी मंत्र-शक्ति का परिचय देकर हमारा मनोरंजन कीजिए; तब आप चोर का पता बताइये।"

साधू ने राजा के हाथ तोता देकर कहा– "राजन, आप इस तोते से जो सवाल पूछना चाहते हैं, पूछ लीजिए। इस तरह इसकी परीक्षा हो जाएगी।"

"हमारे अंत:पुर में कितने नौकर हैं?" राजा ने तोते से पूछा। "तिरपन।" तोते ने उत्तर दिया।

मोहन सिंह

"उनमें से क्या तुम कुछ लोगों के नाम बता सकते हो ?" राजा ने फिर पूछा ।

तोते ने झट से कुछों के नाम धड़ाधड़ गिनाये ।

दरबार हर्षनादों से गूंज उठा ।

इस पर राजा ने दरबार को संबोधित कर कहा–"अब भी सही, चोर यदि हमारा हार लाकर सौंप देगा तो उसे दण्ड दियें बिना क्षमा कर दूगा । चोर का पता पल भर में यह तोता दे सकता है । फिर भी मैं चोर को दण्ड देना नहीं चाहता, इस ख्याल से चोर को मैं फिर एक बार मौक़ा देता हूँ कि वह हमारा हार लौटा कर क्षमा माँग ले ।"

सभी दरबारियों ने राजा की इस उदारता की प्रशंसा की ।

उस दिन रात को राजा भोजनोपरांत विश्राम कर रहा था, तब एक नौकर डरते-डरते राजा के निकट पहुँचा । हीरों का हार राजा के हाथ सौंप कर उन के पैरों पर गिर पड़ा । क्षमा भी मांगी । हार के प्राप्त होने की खुशी में राजा ने उसे डांटा तक नहीं,पर बाद को उसे देश निकाले की सजा देकर भेज दिया ।

चोर को पकड़ने के लिए राजा तथा उसके मंत्री देव वर्मा ने मिल कर जो योजना बनाई थी; इसका पता किसी को न था ।

साधू का वेष धर कर दरबार में प्रवेश करनेवाला व्यक्ति राजा का साला था । वह उस देश का निवासी भी न था । वह तोता उस का पालतू तोता था । तोते को बचपन से ही कुछ बातें सिखलाई गई थीं । वह किसी भी हालत में स्वयं चोर का नाम बतला न सकता था । मगर उस ने अंत:पुर के कुछ नौकरों के नाम रट दिये थे ।

तोते को पास में रख कर भी राजा का चोर को प्रकट हो जाने का आदेश देने में उसकी कोई उदारता नहीं है । केवल चोर को डरा-धमकाने के लिए ही तोते का उपयोग किया गया था ।

रामचन्द्रजी ने रथ पर सवार हो रावण पर बाणों की वर्षा की। इस पर कुपित हो रावण ने रामचन्द्रजी पर गांधर्वास्त्र का प्रयोग किया। रामचन्द्रजी दिव्यास्त्रों के प्रयोग से भली भांति परिचित थे। इस कारण उन्होंने रावण के गांधर्वास्त्र का गांधर्वास्त्र से ही काट दिया।

अपने अस्त्रों के विफल होते देख रावण ने रामचन्द्रजी पर राक्षसास्त्र का प्रयोग किया। उस अस्त्र से निकल कर अनेक विष सर्प ज्वालाएँ उगलते रामचन्द्रजी की ओर बढ़े। रामचन्द्रजी ने गरुडास्त्र का प्रयोग किया। उसमें से निकले गरुड पक्षी रावण के द्वारा प्रयोग किये गये विष सर्पों का संहार करने लगे।

इसे देख रावण क्रोध से पागल हो उठा और उसने रामचन्द्रजी तथा उन के सारथी मातलि पर अनेक अद्भुत बाणों की वर्षा की। रामचन्द्रजी का संहार करने के लिए यही एक अच्छा मौक़ा समझ कर रावण ने इंद्र के वज्रायुध के बराबर का एक शूल अपने हाथ में लिया और कड़क कर बोला–"हे राम, लो, यह अस्त्र तुम्हारे लिए मृत्यु का दूत है। तुम लोगों ने मेरे साथी और अनुचर महान शूर-वीर अनेक राक्षसों का वध किया है, इसलिए उस के प्रतीकार के रूप में मैं तुम्हें तथा तुम्हारे भाई लक्ष्मण का वध करने जा रहा हूँ।" ये शब्द कहकर रावण ने राम पर वह शूल फेंका।

३५. रावण की मृत्यु
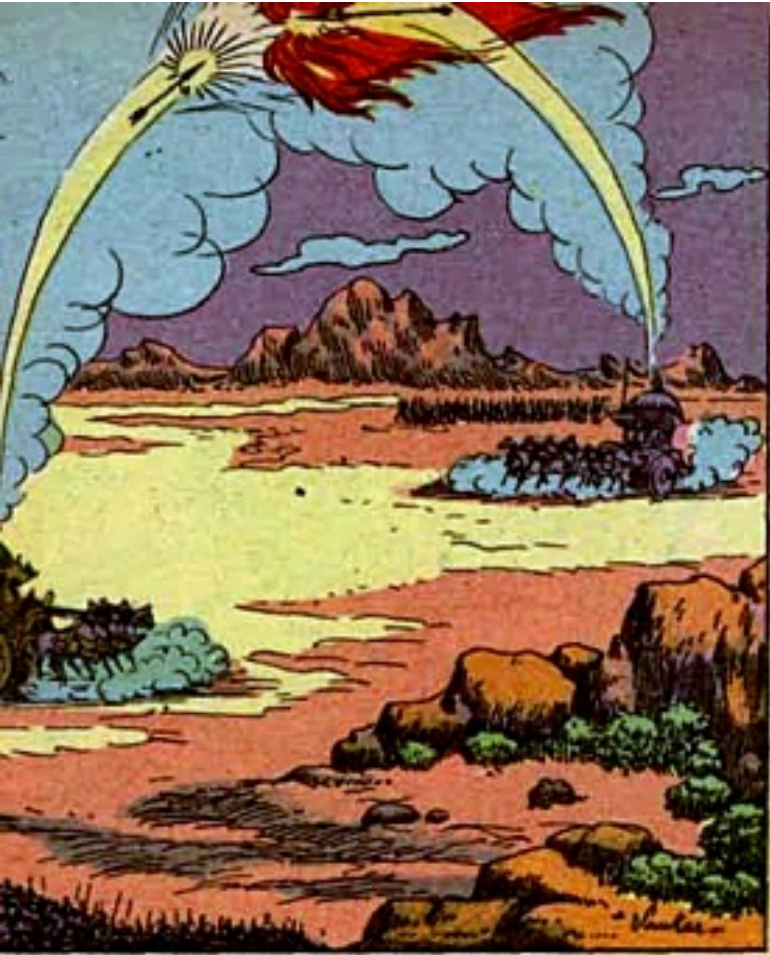
रावण के द्वारा फेंका गया वह शूल आग उगलते प्रलय कालीन गर्जन करते रामचन्द्र की ओर बढ़ा, रामचन्द्रजी ने उसे तोड़ने के लिए जितने अस्त्रों का प्रयोग किया, वे सब शूल का स्पर्श करके भस्म हो हवा में विलीन हो गये। तब जाकर रामचन्द्रजी ने भांप लिया कि रावण का वह शूल कैसा शक्तिशाली है। तब इन्द्र के द्वारा मातलि के हाथ भेजा गजा अस्त्र महाशक्ति का राम ने शूल पर प्रयोग किया। शक्ति के लगते ही रावण का शूल दो टुकड़े होकर नीचे गिर पड़ा।

इस के बाद रामचन्द्रजी ने उत्साह में आकर रावण पर विविध प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग किया। अपने शूल के विफल होते देख रावण चिंतित हो उठा। अब उसे रामचन्द्रजी के अस्त्रों से अपनी आत्मरक्षा करने की नौबत आ पड़ी। इसे भांप कर रावण का रथ सारथी रथ को युद्ध क्षेत्र से दूर ले जाने लगा। राक्षस भय कंपित हो हाहाकार कर उठे।

होश में आते ही युद्ध क्षेत्र से दूर अपने रथ को देख रावण अपने सारथी पर कुपित हो बोला–"अरे दुष्ट, तुमने बिना मेरी अनुमति के युद्ध भूमि से रथ को क्यों लौटाया? क्या तुम मुझे कायर और असमर्थ मानते हो? तुमने यह मूर्खतापूर्ण काम क्यों किया? क्या तुमने शत्रु से रिश्वत ले लिया है? तुमने मेरी प्रतिष्ठा को धूल में मिलाया है। तुरंत तुम रथ को युद्ध भूमि के मध्य ले जाओ।"

रावण के मुंह से ये परुष वचन सुन कर सारथी लज्जित हुआ और विनयपूर्ण स्वर में बोला–"सम्राट, मैं आपका सबसे बड़ा हितैषी हूं। इसी कारण मैंने युद्ध भूमि से रथ को दूर हटाया है। रामचन्द्रजी जो अत्यंत दारूण युद्ध कर रहे हैं, उसके प्रति रूप में आप घोर युद्ध नहीं कर रहे हैं। आप बहुत ही थके हुए हैं। रथ के घोड़े भी थकावट के मारे शिथिल हो गये हैं। आप तथा घोड़ों के लिए थोड़ा विश्राम

की आवश्यकता है। यही सोचकर मैंने रथ को रणभूमि से हटा लिया है। युद्ध क्षेत्र में रथ का संचालन किस स्थिति में कैसा करना है, यह बात मैं न जानता तो मैं रथ का सारथी कैसे बनता? अब आप आदेश दीजिए, मैं क्या करूँ?"

सारथी के मुँह से ये शब्द सुन कर रावण उसकी राजभक्ति तथा समय स्फूर्ति पर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसे एक कंगण पुरस्कार में देकर बोला—"मैं इसी क्षण राम को अपने बाण के प्रहार की बलि देने जा रहा हूँ। तुम यह संकोच मत करो कि मैं थका-मांदा हूँ, सीधे रथ को राम के सामने ले जाओ।"

इस पर सारथी ने रथ को ले जाकर रामचन्द्रजी के सामने खड़ा किया। उस वक़्त रामचन्द्रजी थक कर शिथिल हो रावण के साथ युद्ध करने की स्थिति में न थे। राम-रावण के युद्ध को देखने के लिए देवताओं के साथ अगस्त्य महर्षि भी पधारे थे। वे त्रिकालज्ञ हैं। उन्होंने रामचन्द्रजी की यह दशा देखी। उन्होंने रामचन्द्रजी के पास पहुँचकर समझाया—"रामचन्द्रजी, आप की थकावट को दूर करने तथा आप में पुनः युद्ध करने का उत्साह भरने के लिए मैं आपको आदित्य हृदय नामक स्त्रोत्र सिखाऊँगा; यह स्त्रोत्र समस्त स्त्रोत्रों में उत्तम है। आप उस का जाप करके पुनः शक्तिवान बन कर रावण के साथ युद्ध कीजिए।" इन शब्दों के साथ अगस्त्य महर्षि रामचन्द्रजी को आदित्य हृदय सिखा कर वहाँ से चले गये।

रामचन्द्रजी ने तीन बार उस स्तोत्र का जप किया, पूर्वाधिक उत्साह में आकर धनुष-बाण ले रावण के साथ युद्ध करने आगे आये।

रामचन्द्रजी ने अपने रथ-सारथी मातलि से कहा—"मातलि, मैं इस समय निश्चय ही रावण का वध करने जा रहा हूँ। तुम को बड़ी निपुणता एवं सावधानी से रथ का सारथ्य करना होगा। मैं जानता हूँ कि

छोड़ भय एवं विस्मय के साथ उनके युद्ध को देखने लगे ।

इस प्रकार काफी देर तक भारी युद्ध हुआ, तब रामचन्द्रजी के द्वारा चलाये गये अति तीक्ष्ण बाण के प्रहार से रावण का सिर कट कर नीचे गिरा, पर उसी क्षण रावण के कंधे पर एक और सिर उग आया । रामचन्द्रजी ने एक और बाण का प्रयोग करके उसे भी काट डाला, किंतु आश्चर्य की बात थी कि उस सिर के पृथ्वी पर गिरते ही एक और सिर उग आया ।

रामचन्द्रजी ने इस प्रकार एक सौ एक दफ़े रावण के सिर काट डाले, परंतु हर बार उसके एक और सिर उग आने से वह मरा नहीं । इसे देख रामचन्द्रजी विस्मय में आ गये । उनकी समझ में न आया कि इसके पूर्व रामचन्द्रजी ने दण्डकारण्य में विराध तथा क्रौंचारण्य में कबंध का वध करने के लिए जिन बाणों का प्रयोग किया, वे बेकार क्यों साबित हो रहे हैं ?

राम-रावण ने पल-भर भी विश्राम किये बिना लगातार सात दिन और सात रात युद्ध किये । मातलि सारी स्थिति का अवलोकन कर रहा था, वह जानता था कि रामचन्द्रजी के बाण रावण पर क्यों निष्फल होते जा रहे हैं । कारण रावण की मृत्यु का समय अभी तक निकट न आया था ।

तुम इन्द्र के रथ-सारथी हो, इसलिए तुम्हें विशेष रूप से समझाने की कोई आवश्यकता नहीं है, फिर भी मैं तुम्हें केवल सचेत कर रहा हूँ ।"

मातलि ने राम के वचन सुन कर अश्वों को ललकार कर हांक दिया, रथ को इतनी तेजी के साथ आगे बढ़ाया जिस से पृथ्वी पर से उठनेवाली धूल रावण को ढक दे । रावण इसे देख क्रुद्ध हो उठा और रामचन्द्रजी पर बाणों की वृष्टि कर दी । इन्द्र के द्वारा प्राप्त अस्त्र ग्रहण करके रामचन्द्रजी रावण के साथ युद्ध के लिए तैयार हो गये ।

राम-रावण के बीच अति भयंकर युद्ध हुआ । दोनों पक्षों के वीर युद्ध करना

रामचन्द्रजी ने उस सर्व शक्तिमान महास्त्र का वेद-विधि से मंत्रोच्छारण करके रावण पर प्रयोग किया। वह रावण के वक्ष को भेद कर उस की पीठ में से बाहर निकल गया। रावण के हाथ से धनुष और बाण छूट गये, प्राण खोकर वह रथ से नीचे गिर पड़ा।

अपने राजा की मृत्यु को देख समस्त राक्षसों के कलेजे कांप उठे। वे सब भयभीत हो हाहाकार करते लंका नगर की ओर बेतहाशा भागने लगे। लेकिन वानर विजयनाद करते वृक्षों को उखाड़ कर अन्य आयुध भी हाथ में राक्षसों का पीछा करते हुए बुरी तरह से उनका संहार करने लगे।

मातालि को आठवें दिन पता चला कि रावण का अंतिम समय निकट आया है, उसने रामचन्द्रजी से कहा–"रामचन्द्रजी, यही उचित समय है। आप जरा भी असावधानी दिखाये बिना इस दुष्ट रावण पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करके इसका संहार कर दीजिए।"

मातालि की चोतावनी पाकर रामचन्द्रजी ने भयंकर सर्प जैसे एक बाण को अपने हाथ में लिया। अत्यंत प्रकाशमान उस अस्त्र को ब्रह्मा ने एक समय इंद्र के लिए सृष्टि कर दी थी। वह बाण अत्यंत भारी था, उसके विशाल पंख थे। वह वज्र जैसे अति कठिन आयुधों को भी भेद सकता था।

रावण की मृत्यु के होते ही देव-दुंदुभियाँ बज उठीं। आसमान से फूलों की वर्षा हुई। वानरों के साथ आकाश के देवता, गंधर्व तथा चारणों ने रामचन्द्रजी की बड़ी स्तुति की। सुग्रीव और अंगद की प्रसन्नता की सीमा न रही। विभीषण तथा अन्य वानर प्रमुखों ने राम-लक्ष्मण को घेर कर उनकी प्रशंसा की।

अपने भाई की मृत्यु पर विभिषण को भारी दुख हुआ। रावण सीताजी का अपहरण करके बुरी मौत का शिकार बन गया है, मगर वास्तव में वह एक महा

पुरुष है, बड़ा तपस्वी है, पंडित एवं विद्वान पुरुष है। परिनिष्ठित व्यक्ति है। आसधारण वीर, शूर एवं पराक्रमी है।

अपने भाई की मृत्यु पर दुखी हो रहे विभीषण को सांत्वना देते हुए रामचन्द्रजी बोले–"विभीषण, तुम चिंता न करो। रावण कायर की भांति न मरे। वीर की भांति लड़ते हुए युद्ध क्षेत्र में मर गये हैं। महान से महान वीर भी रण क्षेत्र में शत्रु के हाथ मर सकते हैं। वीर की भांति मृत्यु को प्राप्त कर वीरस्वर्ग में जानेवाले के वास्ते शोक नहीं मनाना चाहिए।"

इसके उपरांत रामचन्द्रजी की अनुमति लेकर विभीषण शास्त्र-विधि से अपने भाई की अत्येष्ठि क्रियएँ करने में लग गया।

रावण की मृत्यु का समाचार मिलते ही उसकी पत्नियाँ अंत:पुर से निकल पड़ीं, उत्तरी द्वार से युद्ध क्षेत्र में आकर रावण के शव को देख उस पर गिर पड़ीं और शोक विह्वल हो विलाप कर उठीं कि विभीषण का कहना मान कर सीताजी को रामचन्द्रजी के हाथ सौंप देते तो यह विपदा न आती। मंदोदरी विलाप करते कह उठीं–"तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करके देवताओं के द्वारा सेवाएँ कराने वाले आप अंत में एक साधारण मानव के हाथों में अपने प्राण खो बैठे ?"

इस पर रामचन्द्रजी ने विभीषण को निकट बुलवा कर समझाया–"विभीषण, तुम इन सारी नारियों को अंत:पुर में भेज कर शीघ्र अपने भाई की अंत्येष्ठि क्रियाएँ करो। विलंब न करो।"

अंतिम क्षण में विभीषण के मन में एक संदेह पैदा हुआ। उसका भाई रावण चाहे बड़े ही धर्मात्मा, महा ज्ञानी भले ही हो, पर पराई नारी को बन्दी बना कर ले आया और अत्यंत दुष्ट एवं नीच कहलाया, ऐसे व्यक्ति का अग्नि-संस्कार जैसे कर्मकांड करना क्या धर्म सम्मत है ?

यह संदेह विभीषण ने रामचन्द्रजी के सम्मुख प्रकट किया। तब रामचन्द्रजी

रावण के अन्य उत्तम गुणों की प्रस्तुति करके बोले—"तुम्हारे भाई की अंत्येष्ठि क्रियाएँ तुम्हारे हाथों द्वारा संपन्न करना सब प्रकार से धर्म सम्मत है।"

इसके बाद ब्राक्षणों ने चंदन की लकड़ियों की चिता बनाई। उस पर एक कंबल बिछाया, रावण के शव का अलंकार करके उसे चिता पर लिटाया। विभीषण ने चिता में आग लगाई। इसके अपरांत उसने स्नान किया, तर्पण करके रावण की पत्नियों को लंका में भेजा, तब रामचन्द्रजी के पास लौट आया।

राम-रावण के युद्ध को देखने आये हुए देवता तथा गंधर्व रामचन्द्रजी के पराक्रम तथा वानरों के भीकर युद्ध की चर्चा करते हुए अपने अपने निवासों को लौट गये।

रामचन्द्रजी ने मातालि का सत्कार किया। इन्द्र के रथ के साथ उसे स्वर्ग में भेज दिया। तब लक्ष्मण तथा सुग्रीव को साथ ले रामचन्द्रजी अपने शिविर को लौट आये। वहाँ पर लक्ष्मण से बोले—"हे भाई लक्ष्मण, अब हमें विभीषण को लंका के राजा के रूप में राज्याभिषेक कराना होगा। इसके लिए आवश्यक सारा प्रबंध शीघ्र करवा दो।"

लक्ष्मण ने वानरों के हाथ स्वर्ण कलश देकर समुद्र का जल मँगवाया। उसने स्वयं विभीषण को ले जाकर सिंहासन पर बिठाया, जल से उसका अभिषेक किया। बिभीषण के मंत्री तथा विभीषण के प्रति विश्वास रखनेवाले राक्षसों ने भी जयनाद किये। उस समय विभीषण ने लंका के राक्षसों को आश्वासन के साथ यह वचन दिया कि भविष्य में उनकी सुरक्षा का समुचित प्रबंध किया जाएगा और लंका नगर सुख एवं समृद्धि के साथ विकास को प्राप्त होगा। राक्षस नागरिकों ने विभीषण को असंख्य मूल्यवान उपहार भेंट किये। उस शुभ अवसर पर विभीषण ने कृतज्ञतापूर्वक राम-लक्ष्मणों को विविध प्रकार की अनेक दिव्य वस्तुएँ भेंट कीं।
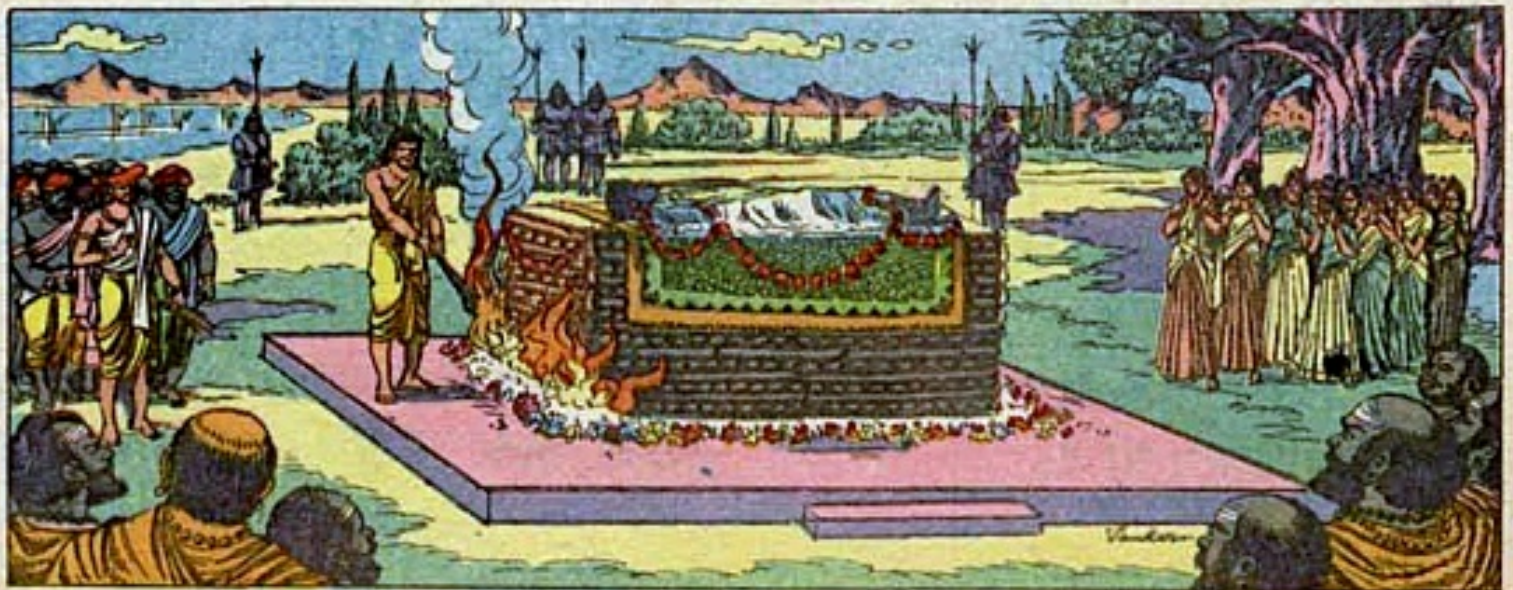
अपराधी सुलतान का फैसला

बंगाल का शासक पठानवंशी सुलतान गियासुद्दीन शिकार खेलने का बड़ा शौकीन था। उसने अपने महल के समीप में स्थित जंगल को शिकार खेलने के लिए चुन रखा था।

एक दिन सबेरे सुलतान शिकार खेलने जंगल में चला गया। वहाँ पर उसने एक हिरण को देखा, लेकिन भागनेवाले हिरण पर निशाना लगाकर मार डालना आसान न था। सुलतान ने थोड़ी दूर तक हिरण का पीछा किया और उस पर बाण छोड़ दिया। बाण का निशाना चूक गया और वह एक बालक को जा लगा।

बालक के रोने की आवाज सुनकर उसकी माँ घटना-स्थल पर आ पहुँची। इस बीच सुलतान सीधे अपने महल को चला गया और बालक का इलाज करने के लिए एक हकीम को भेजा। मगर इलाज के बावजूद भी लड़का मर गया।

बालक की माँ को पता न था कि उसके बेटे पर सुलतान ने बाण चलाया है। उस औरत ने सुलतान के महल के पास जाकर न्याय का घंटा बजाया। सुलतान ज्यों ही छत पर आया, उस औरत ने बिनती की– "हुजूर! मेरे बेटे को आपके जंगल में किसी ने बाण चलाकर मार डाला है। बाण चलानेवाला व्यक्ति आपके निकट का होगा। आप कृपया अपराधी को दण्ड दीजिए!"

सुलतान ने इतमीनान से जवाब दिया– "माँ! आपराधी का फ़ैसला करके न्याय-निर्णय करनेवाला व्यक्ति काजी है। तुम उनके पास जाकर फ़रियाद करो।"
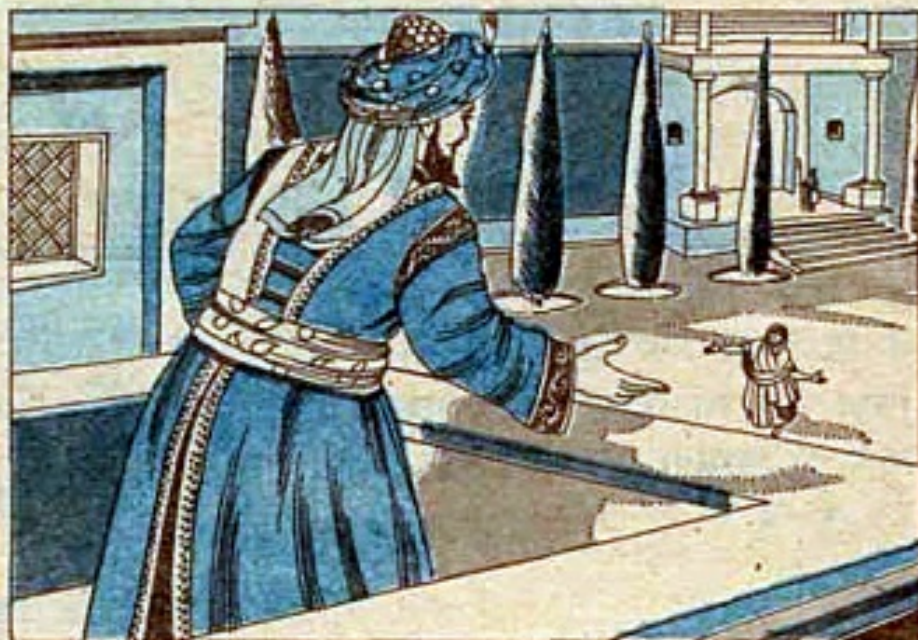
उस औरत ने काजी के पास जाकर सारा समाचार सुनाया। बालक के चोट खाने के प्रदेश का नाम सुनते ही काजी के मन में शंका हुई कि बाण चलानेवाला व्यक्ति ज़रूर सुलतान ही होगा। उस जंगल में शिकार खेलने के लिए सिवाय सुलतान के कोई नहीं जाता! उसकी समझ में न आया कि क्या किया जाय?

बालक की माँ को पता न था कि उसके बेटे पर सुलतान ने बाण चलाया है। उस औरत ने सुलतान के महल के पास जाकर न्याय का घंटा बजाया। सुलतान ज्यों ही छत पर आया, उस औरत ने बिनती की– "हुजूर! मेरे बेटे को आपके जंगल में किसी ने बाण चलाकर मार डाला है। बाण चलानेवाला व्यक्ति आपके निकट का होगा। आप कृपया अपराधी को दण्ड दीजिए!"

सुलतान ने इतमीनान से जवाब दिया– "माँ! आपराधी का फ़ैसला करके न्याय-निर्णय करनेवाला व्यक्ति काजी है। तुम उनके पास जाकर फ़रियाद करो।"
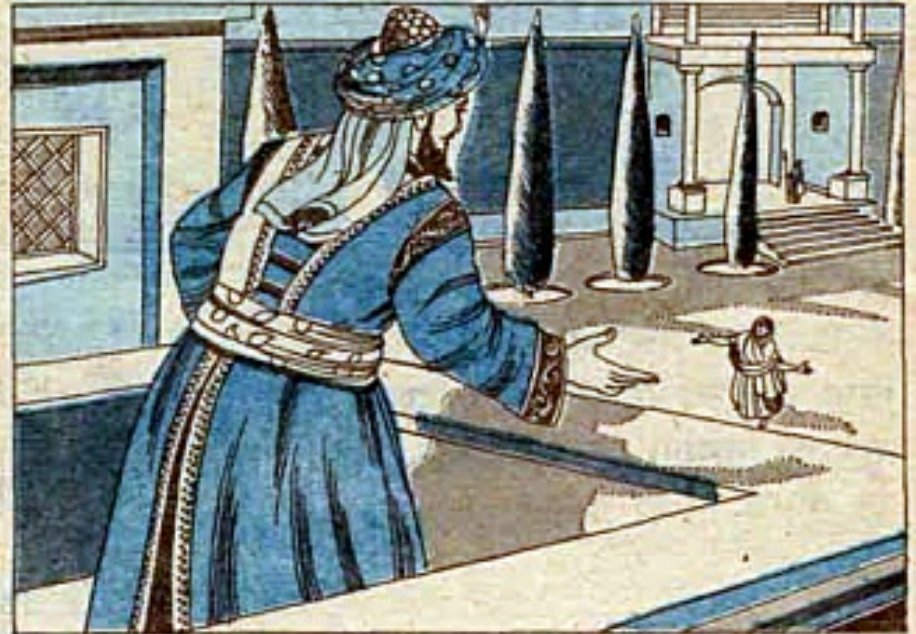
उस औरत ने काजी के पास जाकर सारा समाचार सुनाया। बालक के चोट खाने के प्रदेश का नाम सुनते ही काजी के मन में शंका हुई कि बाण चलानेवाला व्यक्ति जरूर सुलतान ही होगा। उस जंगल में शिकार खेलने के लिए सिवाय सुलतान के कोई नहीं जाता! उसकी समझ में न आया कि क्या किया जाय?

इसके थोड़ी देर बाद सुलतान ने अपने नौकर के द्वारा काजी के नाम एक चिट्ठी भेजी। उसमें लिखा था– "मैंने हिरण पर जो बाण चलाया, निशाना चूककर एक बालक को जा लगा और वह मर गया है। आप जो उचित समझें, सो करें!" काजी ने सोचा कि 'शायद सुलतान सोचता है कि यह रहस्य कहीं प्रकट न हो।'
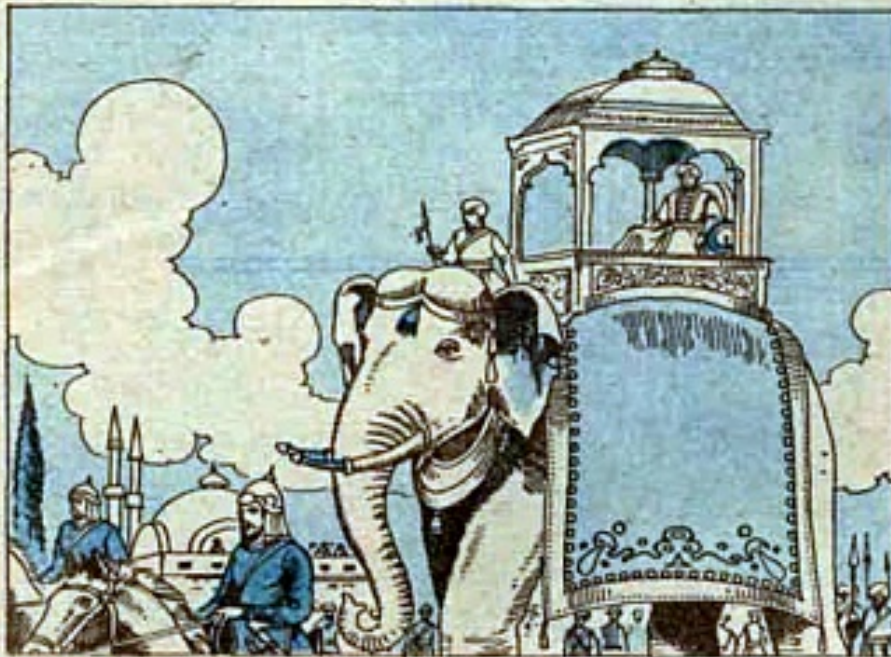
काजी ने इस बात पर गंभीरतापूर्वक विचार किया, आख़िर एक निर्णय पर पहुँचकर सुलतान को आदालत में हाजिर होने की ख़बर भेजी! यह ख़बर सभी लोगों पर प्रकट हो गई। इसलिए अदालत में जानेवाले सुलतान के पीछे लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी।

सुलतान ज्यों ही अदालत में पहुँचा, त्यों ही काजी को छोड़ बाक़ी सभी लोग उठ खड़े हुए। काजी ने अपने मन में सोचा–"सुलतान भले ही मुझे मौत की संजा दे, पर मैं निर्भयता पूर्वक उसका फ़ैसला करके अपने पुत्र को खोनेवाली औरत के प्रति न्याय करूँगा :"
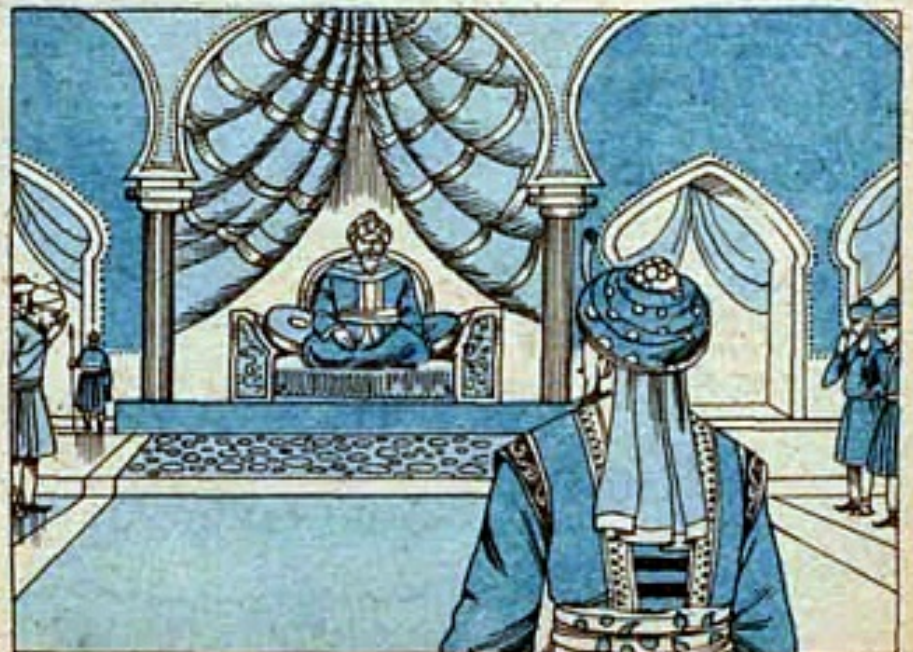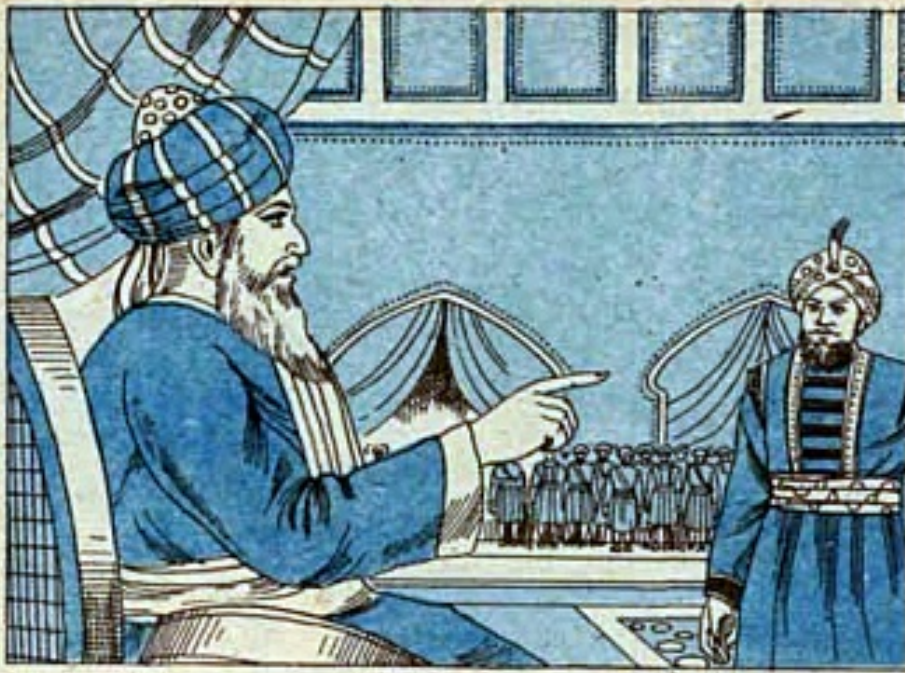
सुलतान ज्यों ही काजी के सामने आया, काजी बोला—"तुमने अपने अपराध को स्वीकार कर लिया है। तुम्हारी भूल ही लड़के की मौत का कारण बन गई। अगर उस बालक की माँ तुम्हें क्षमा करने को तैयार हो जाय तो तुम्हें कोई सजा न होगी; वरना तुम्हें उचित दण्ड भोगना पड़ेगा।"

सुलतान ने उसी वक्त उस औरत से क्षमा माँगी और उसे हर्जाना के रूप में भारी मात्रा में सोने की अशर्फ़ियाँ दी। उस औरत ने प्रसन्न होकर सुलतान को क्षमा कर दिया।

दूसरे ही क्षण काजी ने कहा—"हजूर, अपराध का फ़ैसला हो गया है। अब आप इस आसन पर विराजमान हो जाइए।" इस पर सुलतान ने चाबुक निकाल कर कहा—"अगर तुमने सही ढंग से अपराध का फ़ैसला न किया होता तो तुम्हें सब के सामने मैंने इस चाबुक से मारना चाहा। तुम जैसे व्यक्ति का काजी होना मेरे लिए गर्व की बात है।" इन शब्दों के साथ सुलतान ने काजी को गले लगाया।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

अवंतीसिंह की दुधारू गाय ने जब दूध देना बंद किया तब उसकी पत्नी ने उसे हाट में ले जाकर बेचने पर मजबूर किया। अवंतीसिंह लाचार होकर गाय को हाट में ले गया। एक जगह बैठकर चिल्लाने लगा—"यह गाय दूध नहीं देती, सींग मारती है, कोई ख़रीदना चाहे तो ख़रीद लो।"

कोई भी ग्राहक गाय ख़रीदने आगे न आया।

एक बुद्धिमान व्यक्ति ने अवंती सिंह के भोलेपन पर रहम करके कहा—"लो देखते रहो, अभी मैं तुम्हारी गाय को बिकवा देता हूँ!"

इसके बाद वह आगंतुक चिल्लाने लगा—"यह गाय बड़ी साधु स्वभाव की है। रोज़ दस सेर दूध देती है। दाम भी सस्ता है। देरी करोगे तो पछताओगे।"

ये बातें सुन अवंतीसिंह बोल उठा—"अगर मेरी गाय साधु स्वभाव की होती, रोज़ दस सेर दूध देती, तो मैं क्यों कर इसे बेच देता? मेरी गाय को मुझे लौटा दो।"

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें—"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें सितम्बर १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के नवम्बर '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

जुलाई मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "वर जो शाप बना"

पुरस्कृत व्यक्ति: **श्री अजयकुमार,** डी ४८/१३९ १ तल्ला, मिश्रपोखरा, वाराणसी

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां नवम्बर १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Anant Desai

★

R. Jayapalan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ सितंबर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जुलाई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: झूम झूम कर हाथी चला!

द्वितीय फोटो: मैं बेचता अपनी कला!

प्रेषक: श्री सुनील मित्तल, १९१८/२८ रेगरपुरा करोलबाग, नई दिल्ली-५

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

चुन्नु का ड्राईंग में प्रथम आने का रहस्य ?

कॉलिंक

के रंग

आप भी कॉलिंक के रंग इस्तेमाल करें
और चुन्नु की तरह प्रथम आयें।

पोस्टर
व वाटर कलर

आर्टमास्टर
व चित्रकार कलरबाक्स

कॉलिंक इन्डस्ट्रीज नजफ़गढ़ रोड, नई दिल्ली-110015

बैंक आखिर है क्या?

मेरे विचार से तो 'बैंक' नदी के पास होता है।

चलो हम लोग देख क्यों न लें?

यूनाइटेड कमर्शियल बैंक

यूना-कम-बैंक

बैंक!

यह तो एक बड़ी दूकान सी दिखती है। लेकिन ये तमाम काउन्टर क्यों हैं?

देखो! उस औरत का सारा पैसा उस आदमी ने बिना कुछ दिये ही ले लिया।

जल्दी करो, हम उन महाशय से यह सब कहें।

क्रमशः

रसीली
प्यारी
मज़ेदार

पारले पॉपिन्स

फलों के स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद—
रासबेरी, अनन्नास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी.

PARLE POPPINS MIXED FRUITY SWEETS

everest/1036/PP-hn